इग्नू
जन–जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDC - 102
हिन्दी साहित्य का इतिहास (आधुनिक काल)

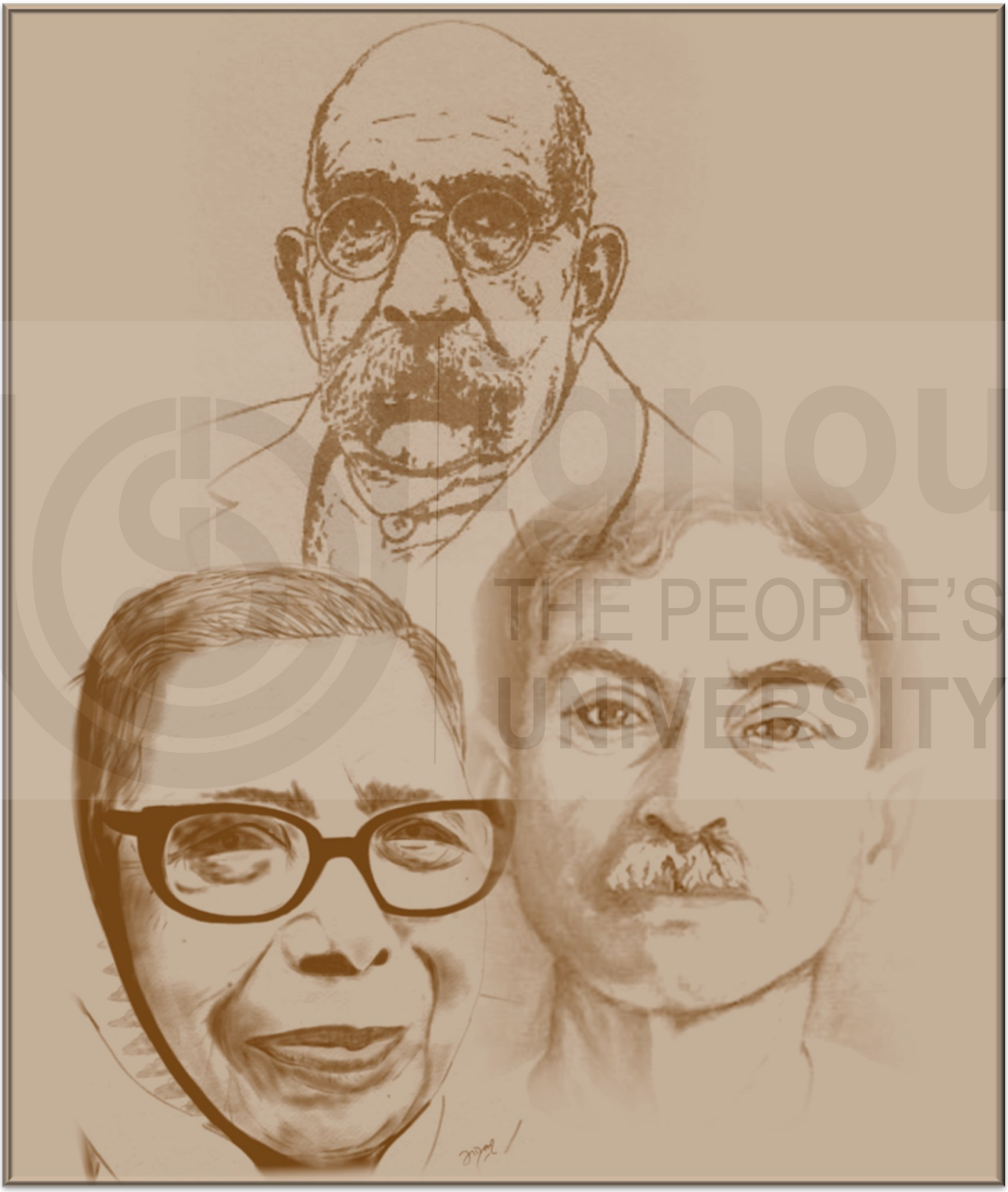

''शिक्षा मानव को बन्धनों से मुक्त करती है और आज के युग में तो यह लोकतन्त्र की भावना का आधार भी है। जन्म तथा अन्य कारणों से उत्पन्न जाति एवं वर्गगत विषमताओं को दूर करते हुए मनुष्य को इन सबसे ऊपर उठाती है।''

– इन्दिरा गाँधी

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

"Education is a liberating force, and in our age it is also a democratising force, cutting across the barriers of caste and class, smoothing out inequalities imposed by birth and other circumstances."

– Indira Gandhi

इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDC 102
हिंदी साहित्य का इतिहास (आधुनिक काल)

खंड

1

आधुनिक हिंदी साहित्य

इकाई 1

नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन 7

इकाई 2

आधुनिक हिंदी साहित्य का आरंभ और भारतेंदु युग 26

इकाई 3

द्विवेदी युग 50

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

प्रो. मैनेजर पाण्डेय
बीडी/8ए, डी.डी.ए. फ्लैट, मुनिरका
नई दिल्ली–110056

प्रो. निर्मला जैन
ए–20/17, डी.एल.एफ., सिटी, फेज–1,
गुड़गांव–122002, हरियाणा

प्रो. नित्यानंद तिवारी
सी–1, न्यू मुल्तान नगर, रोहतक रोड,
नई दिल्ली–110067

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी
बी–5, एफ–2, दिलशाद गार्डन,
दिल्ली–110035

प्रो. हरिमोहन शर्मा
184, कादम्बरी अपार्टमेंट,
सेक्टर–9,
रोहिणी, दिल्ली–110085

प्रो. गोबिंद प्रसाद
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली

संकाय सदस्य
प्रो. सत्यकाम (निदेशक)
प्रो. शत्रुघ्न कुमार
प्रो. स्मिता चतुर्वेदी (पाठ्यक्रम संयोजक)
प्रो. जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

इकाई लेखक	इकाई सं.
प्रो. जवरीमल पारख (सेवानिवृत्त) इग्नू, नई दिल्ली	1
प्रो. रामबक्ष जाट (सेवानिवृत्त) जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	2
प्रो. पूरनचंद टंडन दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	3

पाठ्यक्रम संयोजन एवं संपादन
प्रो. स्मिता चतुर्वेदी
मानविकी विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

सहयोग
डॉ. दिनेश कुमार
डॉ. शंभुनाथ मिश्र
श्री अरुण कुमार पाण्डेय
परामर्शदाता, मानविकी विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

सचिवालयीय सहयोग
श्री नवल कुमार
मानविकी विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

आवरण
श्री रंजन कुमार सिंह

सामग्री निर्माण

श्री तिलक राज
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)
सा.नि. एवं वि.प्र., इग्नू, नई दिल्ली

श्री बाबूलाल रेवाड़िया
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
सा.नि. एवं वि.प्र., इग्नू, नई दिल्ली

जनवरी, 2020

© *इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2020*

ISBN : 978-93-89668-61-2

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश, मिमियोग्राफ या किसी भी अन्य रूप में, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी अन्य व्यक्ति द्वारा पुनरुत्पादित नहीं किया जा सकता है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय से संबंधित सूचना प्राप्त करने के लिए इसके मैदान गढ़ी, नई दिल्ली–110 068 स्थित कार्यालय से संपर्क किया जा सकता है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से कुलसचिव, सामग्री निर्माण एवं वितरण प्रभाग द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेजर कम्पोजिंगः राजश्री कम्प्यूटर्स, V-166A, भगवती विहार, उत्तम नगर, (नजदीक सैक्टर 2, द्वारका), नई दिल्ली–59
मैसर्सः राज प्रिंटर्स, ए–9, सैक्टर बी–2, ट्रॉनिका सिटी, लोनी, गाजियाबाद (यू.पी.)

पाठ्यक्रम परिचय

प्रस्तुत पाठ्यक्रम हिंदी साहित्य के इतिहास के अंतर्गत आधुनिक काल से संबद्ध है। हिंदी साहित्येतिहास का अंतिम कालखंड आधुनिक काल के नाम से जाना जाता है। आधुनिक शब्द दो अर्थों को अपने में समाहित किए हुए है। एक है मध्यकाल से भिन्नता और दूसरा है इहलौकिक दृष्टिकोण। मध्यकाल अपने अवरोध, जड़ता और रूढ़िवादिता के कारण स्थिर और रूढ़ हो चुका था। 1857 का विद्रोह मध्ययुग की जड़ता की समाप्ति और आधुनिक युग के आरंभ का उद्घोष था। सामन्तवादी शक्तियाँ अपनी सारी शक्ति लगाकर समाप्त हो गईं और देश के प्रबुद्ध वर्ग ने नए सिरे से सोचना आरंभ किया। इसी प्रकार रीतिकाल में साहित्य अपने कथ्य और शैली की दृष्टि से रूढ़ हो चुका था। आधुनिक काल ने इस जड़ता को खंडित किया और जीवन की धारा विविध स्रोतों में फूट निकली। साहित्य मनुष्य के सुख–दुख के साथ जुड़ गया।

हिंदी साहित्य के आदिकाल से लेकर रीतिकाल तक के लंबे इतिहास में आधुनिक हिंदी साहित्य अपने पूर्ववर्ती हिंदी साहित्य से वर्ण्य–विषय, रूप, विधा आदि में सर्वथा भिन्न है। आदिकालीन साहित्य में शृंगार, वीर, भक्ति, नीति तथा लौकिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ प्रधान रहीं तो भक्तिकाल में भक्ति के निर्गुण और सगुण पक्षों का वर्णन और विवेचन होता रहा। रीतिकाल में शृंगारिकता, ऊहात्मकता, रूढ़िवादिता तथा शास्त्रीयता से समृद्ध एक विशेष प्रकार के साहित्य की रचना हुई। इन तीनों युगों की यात्रा का परिवर्धित और संवर्धित रूप तब सामने आया जब नवीन ऐतिहासिक प्रक्रिया प्रारंभ हुई और आधुनिक गत्यात्मकता का संचार होने लगा। रीतिकाल का शृंगारिक ढाँचे में बद्ध साहित्य युगीन–सत्य और वास्तविकता का परिचय तो देता है लेकिन युगीन अपेक्षाओं, जरूरतों और विविधताओं तक इसकी पहुँच नहीं हो पाई। साहित्य जब बदलते युग और विकासमान दृष्ट को अपेक्षानुसार दिशा–निर्देश और विविध वैचारिक आधार देने में सक्षम नहीं हो पाया तो युगीन घुटन से उत्पन्न हुई जागृति और समय की माँग ने साहित्य को नवीन दिशा दी। साहित्य मानव जाति के सुख–दुख, आचार–विचार और बदलती मानसिकता से जुड़ा। इन सबके परिणामस्वरूप एक ऐसी चेतना उभरी जिसे आधुनिक युग के नाम से जाना गया।

आधुनिक का अर्थ होता है इस समय का या वर्तमान समय का। इस दृष्टि से देखा जाए तो हम केवल अपने सामने उपस्थित समय को ही आधुनिक काल और अपने सामने रचित साहित्य को आधुनिक साहित्य कह सकते हैं। परन्तु जब हम हिंदी साहित्य के इतिहास को देखते हैं तो पाते हैं कि आदि काल से लेकर रीतिकाल की समाप्ति तक आते–आते पाश्चात्य प्रभाव और पाश्चात्य आक्रान्ताओं द्वारा भारत पर अधिकार किए जाने से उत्पन्न हुई नई राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों का हिंदी साहित्य पर गहरा और व्यापक प्रभाव पड़ा। हिंदी साहित्य को नई दृष्टि, नए विषय, परिवर्धित भाषा और नए रूप प्राप्त हुए। हिंदी साहित्य में ही नहीं बल्कि लगभग संपूर्ण भारत की प्रमुख भाषाओं के साहित्य में भी परिवर्तन उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में दृष्टिगत होने लगा था।

आधुनिक काल का आरम्भ उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से माना जाता है। 1857 की क्रांति भारतीय इतिहास की एक बड़ी घटना है। वस्तुतः यह क्रांति मध्य युग की समाप्ति और आधुनिक युग के आरम्भ का उद्घोष है। पश्चिमी ज्ञान विज्ञान से भारतीय जनता का सम्पर्क और संघर्ष हुआ, फलतः आधुनिक युग का जन्म हुआ। नई तकनीकों के वैज्ञानिक आगमन के कारण गद्य साहित्य का तेजी से विकास हुआ। राष्ट्रीय आंदोलन अपने नए तेवर के साथ सामने आया। इससे हिंदी साहित्य प्रभावित हुआ। 1900 से 1920 तक के

साहित्य में राष्ट्रीयता का स्वर उभर कर सामने आया, 1920 से 1936 तक गांधी और रवीन्द्रनाथ ठाकुर का प्रभाव साहित्य पर पड़ा।

यह पाठ्यक्रम हिंदी साहित्य के इतिहास के आधुनिक काल की पृष्ठभूमि, वैचारिक आधार और साहित्य के विविध रूपों पर आधारित है। इस पाठ्यक्रम में तीन खण्ड हैं। जिसमें गत्यात्मक विकास और तारतम्यता को दृष्टि में रखा गया है। पाठ्यक्रम का पहला खण्ड 'आधुनिक हिंदी साहित्य' है। इस खण्ड में तीन इकाइयाँ हैं। इन इकाइयों में हमने भारतीय नवजागरण के समय की परिस्थितियों का उल्लेख करते हुए नवजागरण के उदय के कारणों को स्पष्ट किया है और साथ ही युगीन वैचारिक आधारों और हिंदी साहित्य के आरंभ पर पर्याप्त चर्चा भी की है। इसी खण्ड में भारतेंदु युगीन तथा द्विवेदी युगीन साहित्य के विविध रूपों का परिचय भी प्रस्तुत किया है।

खण्ड–2 'आधुनिक हिंदी काव्य' है। इस खण्ड में पाँच इकाइयाँ हैं जिनमें द्विवेदी युग के बाद हिंदी काव्य की विविध प्रवृत्तियों यथा छायावाद, उत्तरछायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता तथा समकालीन हिंदी काव्य से आपको परिचित कराया जाएगा। इन इकाइयों में आप इन काव्य प्रवृत्तियों की पृष्ठभूमि, प्रमुख विशेषताओं तथा प्रमुख कवियों के बारे में अध्ययन करेंगे।

खण्ड–3 'आधुनिक हिंदी गद्य' है। इस खण्ड में कुल पाँच इकाइयाँ हैं। ये इकाइयाँ हिंदी गद्य की विविध विधाओं के इतिहास और विकास पर आधारित हैं। गद्य का विकास आधुनिक काल की प्रमुख विशेषता है। इस युग में कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध, आलोचना, संस्मरण, आत्मकथा, जीवनी, रेखाचित्र आदि से संबंधित जो भी साहित्य रचा गया उसकी समग्र जानकारी देने का प्रयास हमने इस खण्ड में किया है।

इस प्रकार इस पाठ्यक्रम में हिंदी साहित्य के आधुनिक काल की पृष्ठभूमि के साथ–साथ साहित्य की विविध विधाओं और साहित्य की विविध प्रवृत्तियों को पर्याप्त विस्तार एवं गहराई से तार्किक और प्रामाणिक बनाकर अपके समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। हमें विश्वास है कि इस पाठ्यक्रम का अध्ययन करने के बाद आप आधुनिक हिंदी साहित्य से संबंधित सभी महत्वपूर्ण पक्षों से परिचित हो पाएँगे। प्रत्येक इकाई अथवा खण्ड के साथ हमने कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकों की सूची भी प्रस्तुत की है। विषय को अधिक गहराई और व्यापक रूप से समझने के लिए आप इनका भी अध्ययन करें।

शुभकामनाओं के साथ!

खंड 1 परिचय

इस पाठ्यक्रम में आप हिंदी साहित्य के इतिहास के आधुनिक काल का गहन एवं विस्तृत अध्ययन करेंगे। प्रस्तुत खंड हिंदी साहित्य के आधुनिक काल से संबद्ध है। आधुनिक युग का प्रारंभ भारत में उन्नीसवीं सदी से माना जाता है। इस खंड में आप अध्ययन करेंगे कि आधुनिक साहित्य किस तरह की परिस्थितियों की देन था। ये परिस्थितियाँ केवल राजनीति से ही संबद्ध नहीं थी अपितु इनका संबंध सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से भी था। इसके साथ ही इसमें भारतीय नवजागरण के उदय के कारणों का परिचय देते हुए भारतीय नवजागरण के साथ–साथ हिंदी नवजागरण की विशेषताएँ उल्लिखित की गई हैं। अन्तिम दो इकाइयों में आधुनिक युग के आरंभ अर्थात् भारतेन्दु युग की पृष्ठभूमि को पद्य तथा गद्य में व्यारव्यायित किया गया है तथा साथ ही साथ भारतेन्दु युगीन हिंदी साहित्य एवं द्विवेदी युगीन हिंदी साहित्य का विश्लेषण किया गया है।

इस खंड में कुल तीन इकाइयाँ हैं। इकाई 1 'नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन है। इस इकाई में भारतीय नवजागरण के समय की परिस्थितियों का उल्लेख करते हुए नवजागरण के उदय के कारण बताए गए हैं। भारतीय नवजागरण के उदय के कारणों का परिचय देते हुए भारतीय नवजागरण के साथ–साथ हिंदी नवजागरण की विशेषताएँ उल्लिखित की गई हैं। नवजागरण का आंदोलन भी स्वाधीनता आंदोलन था। यदि नवजागरण न होता तो स्वाधीनता मिलनी संभव नहीं था। अतः इस इकाई में नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन के बीच के संबंधों पर प्रकाश डाला गया है। इस इकाई में हमारा प्रयास रहा है कि आपके समक्ष नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन की तस्वीर समग्र रूप में प्रस्तुत हो सके।

इकाई 2 'आधुनिक साहित्य का आरंभ और भारतेन्दु युग' है। इस इकाई में हिंदी साहित्य की पृष्ठभूमि स्पष्ट करते हुए गद्य और पद्य, ब्रजभाषा गद्य तथा खड़ी बोली गद्य के प्रारंभ की विवेचना की गई है। साथ ही आधुनिक हिंदी साहित्य के विकास पर विचार करते हुए उसके कारण, प्रारंभिक स्वरूप तथा अंग्रेजी सरकार की भाषा नीति को व्याख्यायित किया गया है। इसके बाद भारतेन्दु युग के गद्य एवं पद्य के प्रमुख साहित्य एवं साहित्यकारों की समीक्षा की गई है साथ ही भारतेन्दु युगीन साहित्य की प्रमुख विशेषताओं की भी चर्चा की गई है।

इकाई 3 'द्विवेदी युग' है। इस इकाई में द्विवेदी युगीन साहित्यिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए इस युग के गद्य और पद्य दोनों ही साहित्य पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही इस युग के साहित्य की विषय–वस्तु एवं भाषा–शैली की दृष्टि से प्रमुख विशेषताओं का विवेचन किया गया है।

इस प्रकार यह खंड संपन्न होता है। खंड की प्रत्येक इकाई में बोध प्रश्न तथा उपयोगी पुस्तकों की सूची दी गई है। बोध प्रश्नों के उत्तर इकाई के अंत में संकेत रूप में या पूर्ण उत्तर के रूप में दिए गए हैं। जिनसे आप अपने उत्तर का मिलान कर सकते हैं।

इकाई 1 नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन की पृष्ठभूमि

1.3 नवजागरण के उदय की परिस्थितियाँ

1.4 भारतीय नवजागरण

1.5 हिंदी नवजागरण

1.6 स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास

1.7 स्वाधीनता आंदोलन की परिणति

1.8 सारांश

1.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

हिंदी साहित्य के इतिहास से संबंधित पाठ्यक्रम 'हिंदी साहित्य का इतिहास आधुनिक काल' के पहले खंड 'आधुनिक हिंदी साहित्य' की पहली इकाई में आप नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- आधुनिक हिंदी साहित्य के अध्ययन की पृष्ठभूमि के रूप में नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन के अध्ययन की आवश्यकता बता सकेंगे;
- नवजागरण के उदय की परिस्थितियों का उल्लेख कर सकेंगे;
- भारतीय नवजागरण के प्रमुख पक्षों का परिचय दे सकेंगे और उसका विकास बता सकेंगे;
- हिंदी क्षेत्र में हुए नवजागरण का विवरण दे सकेंगे;
- नवजागरण आंदोलन और स्वाधीनता आंदोलन के संबंधों को स्पष्ट कर सकेंगे;
- भारतीय स्वाधीनता आंदोलन का संक्षिप्त परिचय दे सकेंगे; और
- स्वाधीनता प्राप्ति और उसके परिणामों पर विचार कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

अब तक आप हिंदी साहित्य के इतिहास के तीन प्रमुख कालों का अध्ययन कर चुके हैं। आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल के अध्ययन से आप जान चुके हैं कि हिंदी साहित्य

के मध्यकाल तक वीरगाथा, भक्ति और श्रृंगार संबंधी साहित्य की अधिक रचना हुई। लेकिन जब हम आधुनिक युग में प्रवेश करते हैं तो साहित्य का स्वरूप काफी कुछ बदल जाता है। वैसे तो हिंदी साहित्य के इतिहास का पहला विधिवत लेखन करने वाले आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने आदिकाल और मध्यकाल के साहित्य की विभिन्न प्रवृत्तियों का उल्लेख करते हुए उनकी तत्कालीन परिस्थितियों से संबंध की व्याख्या भी की थी। लेकिन आधुनिक हिंदी साहित्य को तो हम तब तक नहीं समझ सकते जब तक हम आधुनिक काल की परिस्थितियों को नहीं जानते। इसी बात को ध्यान में रखते हुए आधुनिक हिंदी साहित्य के शुरू में नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन का परिचय देने के लिए इस इकाई को रखा गया है।

इस इकाई से पहले आपने जिन साहित्यिक प्रवृत्तियों का अध्ययन किया है उनसे आधुनिक युग काफी भिन्न है। आधुनिक युग की शुरूआत भारत में उन्नीसवीं सदी से मानी जाती है। भारत में यूरोपीय जातियों का आगमन वैसे तो अकबर के समय से शुरू हो गया था लेकिन उन्हें अपने पैर जमाने और विस्तार करने का अवसर मुख्य रूप से अठारहवीं सदी में ही मिला था। 1757 ई. में प्लासी के युद्ध में नवाब सिराजुद्दौला की हार और अंग्रेजों की जीत भारतीय इतिहास में निर्णायक मोड़ की सूचक है। इस घटना के साथ ही भारत पर अंग्रेजों का राजनीतिक अधिकार होने लगा था जो अगले सौ साल तक निरंतर बढ़ता गया। नए-नए राज्य अंग्रेजों के अधीन आते गए। 1857 ई. में अंग्रेजों को भारत से भगाने के लिए उन्हीं के अधीन काम करने वाले भारतीय सैनिकों ने विद्रोह किया। 1857 में यद्यपि भारतीय सैनिकों को विजय हासिल नहीं हो सकी लेकिन भारतीयों ने यह समझ लिया कि अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष के तरीके बदलने होंगे। फिर कांग्रेस की स्थापना हुई। अंग्रेजी पराधीनता के विरुद्ध भारतीयों का संघर्ष निरंतर जारी रहा और 1947 में देश को आजादी मिली। इस आजादी की कीमत देश को बँटवारे के रूप में देनी पड़ी।

अंग्रेजों ने भारत को राजनीतिक रूप से ही गुलाम नहीं बनाया था बल्कि मानसिक रूप से भी गुलाम बनाने का प्रयास किया था। अंग्रेजों ने इस बात का एहसास भी कराया कि भारतीय उनकी तुलना में पिछड़े हुए हैं। इन्हीं स्थितियों ने नवजागरण की जरूरत को रेखांकित किया। नवजागरण के आंदोलन और स्वाधीनता आंदोलन एक दूसरे से जुड़े हुए थे। आधुनिक हिंदी साहित्य पर नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन दोनों का असर पड़ना स्वाभाविक था।

इस इकाई में हम आपको भारतीय नवजागरण के समय की परिस्थितियों का उल्लेख करते हुए नवजागरण के उदय के कारणों का परिचय देंगे। फिर, भारतीय नवजागरण की सामान्य विशेषताओं का उल्लेख करेंगे। भारतीय नवजागरण का अंग होते हुए भी हिंदी नवजागरण की अपनी विशेषताएँ हैं। इन विशेषताओं से भी आपको परिचित कराया जाएगा। अध्ययन की सुविधा लिए नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन का अलग-अलग उल्लेख किया गया है लेकिन इस बात को समझने की आवश्यकता है कि नवजागरण का आंदोलन भी स्वाधीनता का आंदोलन था और स्वाधीनता संभव नहीं होती यदि नवजागरण का आंदोलन नहीं होता। इसलिए इस इकाई में नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन के बीच के संबंधों पर भी विचार किया गया है।

स्वाधीनता आंदोलन का संक्षिप्त परिचय देते हुए इकाई के अंत में स्वाधीनता की प्राप्ति की परिस्थितियों और परिणामों के बारे में भी बताया गया है। इस इकाई का अध्ययन करने से आप के सामने यह स्पष्ट हो जाएगा कि आधुनिक साहित्य किस तरह की

परिस्थितियों की देन था। इन परिस्थितियों का संबंध सिर्फ राजनीति से नहीं था बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से भी था, इसलिए इकाई में इन पक्षों पर यथासंभव प्रकाश डाला जाएगा। नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन के बारे में किसी एक इकाई में सबकुछ बता देना काफी मुश्किल काम है। फिर भी, यथासंभव हमने प्रयास किया है कि नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन की एक समग्र तस्वीर प्रस्तुत हो सके।

1.2 नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन की पृष्ठभूमि

एक राष्ट्र के रूप में भारत का उदय आधुनिक युग की घटना है लेकिन भौगोलिक दृष्टि से भारत एक इकाई के रूप में बहुत पहले से मौजूद रहा है। इस भौगोलिक क्षेत्र में बाहर से विभिन्न जातियों का आवागमन निरंतर होता रहा है। इतिहास में बहुत पीछे न भी जाएँ तो इतिहासकार यह मानते हैं कि ईसा के तीन हजार से डेढ़ हजार साल पहले के दौर में मध्य एशिया से जो लोग आए और जिन्हें आर्य कहकर जाना गया वे सबसे पुराने ज्ञात समूह थे जो इस धरती पर बसे। हालाँकि यहाँ इससे पहले भी कई जातियाँ रह रही थीं। इन्हीं में वे लोग भी थे जिनके अवशेष हड़प्पा और मोहन जोदड़ो की खुदाई में मिले थे। आर्यों के आगमन के बाद भी कई जातीय समूह इस धरती पर आते रहे। इनमें शक, हूण, यवन, मंगोल आदि प्रमुख हैं। इनमें से अधिकांश जातियाँ यहीं बस गईं और यहाँ की संस्कृति में घुलमिल गईं। आज उनकी अलग से पहचान करना बहुत मुश्किल है। लेकिन इस बात को स्वीकार करना होगा कि पहले से रह रही जातियों के साथ घुलने-मिलने की प्रक्रिया में उन्होंने एक-दूसरे से काफी कुछ लिया-दिया होगा। यूरोप से आने वाली जातियों से पहले मध्य एशिया से आने वाले इस्लाम धर्मावलंबी समूहों में से बहुत से यहीं बस गए और यहाँ की सभ्यता और संस्कृति के साथ घुल मिल गए। लेकिन यूरोप से आने वाली जातियों के साथ ऐसा नहीं हुआ। वे यहाँ व्यापार करने आए थे। यहाँ का बना कपड़ा और दूसरी वस्तुएँ वे यूरोप में बेचते थे। बाद में यूरोप में हुई औद्योगिक क्रांति ने स्थितियों को बदल दिया और वे यहाँ से कच्चा माल निर्यात करने लगे और वहाँ के कारखानों में बना माल यहाँ बेचने लगे। भारत में व्यापार के इरादे से आने वाले सिर्फ अंग्रेज नहीं थे वरन् फ्रांसीसी, पुर्तगाली और डच लोग भी थे। लेकिन अंग्रेजों की तुलना में वे भारत के बहुत छोटे से हिस्से पर ही अधिकार जमाने में कामयाब हो सके। अंग्रेजों ने लगभग पूरे भारत पर अधिकार कर लिया और भारत को अपना उपनिवेश बनाने में कामयाब रहे। 1857 से पहले तक भारत पर ब्रिटेन का शासन ईस्ट इंडिया कंपनी के मार्फत था जो एक व्यापारिक कंपनी थी इस कंपनी की अपनी सेना थी और इसने भारत की विभिन्न रियासतों के साथ संघर्ष और समझौते की नीति पर चलते हुए अपने पाँव जमाने शुरू किए। 1857 तक इस कंपनी का शासन लगभग पूरे भारत पर हो गया था। जो रियासतें सीधे अंग्रेजों के अधीन नहीं थीं, उनके साथ भी अंग्रेजों ने कई तरह के समझौते कर रखे थे जिसके तहत वे इन राज्यों का इस्तेमाल युद्ध के दौरान अपने पक्ष में करने में कामयाब होते थे। कहने को दिल्ली पर अब भी मुग़ल बादशाह का शासन था लेकिन उनके पास वास्तविक सत्ता नहीं थी। 1857 में अंग्रेजों से युद्ध करने वाले सिपाहियों ने तत्कालीन मुग़ल बादशाह बहादुरशाह जफ़र को भारत का सम्राट घोषित किया था।

1757 ई. में प्लासी के युद्ध में सिराजुद्दौला के परास्त होने के साथ ही भारत पर अंग्रेजी साम्राज्य की नींव पड़ गई। उन्होंने अपने को राजनीतिक रूप से ही मजबूत करना शुरू नहीं किया बल्कि प्रशासनिक रूप से भी मजबूत करना जरूरी समझा। इसके लिए उन्होंने प्रशासन का वही ढाँचा यहाँ स्थापित किया जो उनके देश में कायम था। इसके लिए

पहले से चले आ रहे ढाँचे को तोड़ना जरूरी था, अंग्रेजों ने यह दोहरा काम किया। यदि एक ओर पहले से चले आ रहे रोजगार और सामाजिक संस्थाएँ समाप्त की जा रही थीं, तो दूसरी ओर, नई संस्थाएँ उन पर थोपी जा रही थीं। भारत के किसानों और शिल्पकारों को अपने परंपरागत रोजगार से अलग किया जा रहा था। विदेश में बने माल को बेचने के लिए जरूरी था कि भारत के परंपरागत उद्योग धंधों को नष्ट किया जाए। अंग्रेजों ने यही काम किया। इसी तरह उन्होंने किसानों को ऐसी पैदावार करने के लिए विवश किया जो उनके लिए फायदेमंद थीं लेकिन इससे भारतीय किसान तबाह हो रहे थे। नील की खेती इसी तरह की पैदावार थी। भारत में पैदा होने वाले कच्चे माल को बंदरगाहों तक पहुँचाने और यूरोप के बने मालों को बाजार तक ले जाने के लिए अंग्रेजों ने रेल की लाइनें बिछाने का काम किया। तारघर खोले। इसी प्रकार शिक्षा, विधि, नागरिक सेवाएँ आदि क्षेत्रों में उन्होंने अपने यहाँ की प्रणाली को लागू किया।

दूसरा महत्त्वपूर्ण काम अंग्रेजी शासन के दौरान यह हुआ कि यहाँ भी ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिए ईसाई मिशनरियाँ आ गईं और उन्होंने इस बात का प्रचार करना शुरू किया कि न केवल ईसाई धर्म महान है बल्कि भारतीय धर्म जिनमें हिंदू और इस्लाम दोनों शामिल हैं, ईसाई धर्म की तुलना में पिछड़े हुए हैं। उन्होंने गरीबों, दलितों और आदिवासियों के बीच काम किया। उनको जरूरी भौतिक सुविधाएँ उपलब्ध कराईं। ईसाई मिशनरियों ने सिर्फ अपने धर्म का प्रचार करने का काम ही नहीं किया बल्कि उन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त बुराइयों की भी तीखी आलोचना की। जातिप्रथा, जिसके कारण छुआछूत जैसी अमानवीय प्रथा हिंदुओं में प्रचलित थी, का विरोध किया। इसी तरह उन्होंने मूर्ति पूजा, पर्दा प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा, वैधव्य आदि सामाजिक और धार्मिक रीति-रिवाजों को अमानवीय बताकर उनके विरुद्ध लोगों को जागृत करने का काम किया। अपने विचारों और अपने धर्म का प्रचार करने के लिए ईसाई मिशनरियों ने भारतीय भाषाओं में पुस्तकें लिखीं। इसके लिए उन्होंने भारतीय भाषाओं का अध्ययन भी किया। संस्कृत आदि प्राचीन भाषाओं का अध्ययन करके प्राचीन भारतीय पुस्तकों का विशेष रूप से दर्शन, साहित्य, धर्म आदि से संबंधित पुस्तकों का अंग्रेजी में अनुवाद किया। उनके इन कार्यों से ही शेष विश्व भारत के प्राचीन इतिहास, धर्म, दर्शन और संस्कृति के बारे में जान सका।

ईसाई मिशनरियों ने भारतीयों के बीच हीन भावना पैदा करने की कोशिश की। भारतीयों के बीच इसकी प्रतिक्रिया स्वाभाविक होना स्वाभाविक था। कुछ भारतीयों ने इस बात को स्वीकार किया कि हमारे जीवन में बहुत कुछ ऐसा है जो प्रतिगामी है और जिसे छोड़ने की जरूरत है, तो दूसरी ओर, कुछ लोगों ने उनकी आलोचना को स्वीकार नहीं किया और वे इस बात को प्रमाणित करने में जुट गए कि आज भले ही हम गुलाम हों लेकिन हमारा अतीत ऐसा नहीं था। हमारा भी एक स्वर्णिम युग था। धर्म और अध्यात्म का क्षेत्र ऐसा है जिसमें हम दूसरों की तुलना में सदैव श्रेष्ठतर रहे हैं। इन दो प्रवृत्तियों ने उस आंदोलन की शुरूआत की जिसे हम आज नवजागरण के रूप में जानते हैं। नवजागरण के आंदोलन में दो प्रवृत्तियाँ थीं . एक, जो यह मानते थे कि भारत सदैव से महान रहा है और भारत के अतीत में वह सब कुछ है जिसका दावा आज का यूरोप करता है। इस प्रवृत्ति को पुनरुत्थानवाद के नाम से जाना जाता है। दो, जो यह मानते थे कि भारत में बहुत सी गलत बातें हैं जिनको छोड़ने से ही हम प्रगति भी कर सकते हैं और गुलामी की जंजीरों से मुक्त भी हो सकते हैं, इसको पुनर्जागरण के नाम से जाना गया। इस दूसरी प्रवृत्ति ने ही आधुनिकता को एक मूल्य के रूप में जरूरी समझा। इसी ने लोकतंत्र, समानता और बंधुत्व के दर्शन से भारतीयों को परिचित कराया। यही नहीं उन्होंने प्राचीन

भारतीय साहित्य और इतिहास में से इस दर्शन के अनुकूल बातें भी खोज निकाली। यही वह पृष्ठभूमि है जिसने भारत में नवजागरण और स्वाधीनता के आंदोलन को संभव बनाया।

बोध प्रश्न

1. भारतीय नवजागरण की दो प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं :

   क. पुनरुत्थानवाद और सामंतवाद

   ख. पुनर्जागरण और लोकतंत्र

   ग. पुनरुत्थानवाद और पुनर्जागरण

   घ. सामंतवाद और पूँजीवाद ( )

2. इनमें से कौन-सा भारतीय नवजागरण के उदय का कारण नहीं है?

   क. अंग्रेजों का आगमन

   ख. कांग्रेस की स्थापना

   ग. ईसाई मिशनरियों का प्रचार

   घ. आधुनिकता शिक्षा का विस्तार ( )

1.3 नवजागरण के उदय की परिस्थितियाँ

जैसा कि कहा जा चुका है कि भारत में यूरोपीय व्यापारिक कंपनियों का आगमन सोलहवीं सदी में हो गया था। लेकिन राजनीतिक रूप से उनका प्रभाव 18वीं सदी में तेजी से बढ़ा। मुग़ल साम्राज्य औरंगजेब के अंतिम काल से कमजोर पड़ने लगा था लेकिन 18 वीं सदी तक आते-आते वह लगभग मरणासन्न अवस्था में पहुँच गया था। प्लासी के युद्ध के साथ ही दो बातें हुईं। एक, अन्य यूरोपीय जातियों की तुलना में अंग्रेजों के प्रभुत्व क्षेत्र का विस्तार तेजी से होने लगा। दो, अंग्रेजों को अपने साम्राज्य का विस्तार करने के लिए मुग़लों से नहीं बल्कि क्षेत्रीय शासकों से संघर्ष करना पड़ रहा था। ये क्षेत्रीय शासक एक ओर अंग्रेजों से लड़ रहे थे, तो दूसरी ओर वे आपस में भी लड़ रहे थे। इन आपसी लड़ाइयों का फायदा अंग्रेजों ने पूरी तरह से उठाया। उन्होंने इन शासकों की आपसी लड़ाई में मददगार बनकर इस या उस पक्ष की तरफ से लड़ाई में हिस्सेदारी की और इस तरह देशी शासकों को कमजोर करने और उनके राज्यों को हड़पने में कामयाबी हासिल की।

राजनीतिक कामयाबी से ही अंग्रेज भारत में अपने शासन को सुदृढ़ और स्थायित्व प्रदान नहीं कर सकते थे। अंग्रेज जानते थे कि भारत में वे शासन तभी कर सकते हैं जब भारतीयों का समर्थन भी उन्हें प्राप्त हो। ईसाई मिशनरियों ने यह काम कुछ हद तक किया लेकिन मिशनरियों के काम की नकारात्मक प्रतिक्रिया भी हुई। भारतीयों के एक बड़े हिस्से में अपने धर्म और अपनी परंपरा के प्रति आस्था और अधिक सुदृढ़ हुई। इसलिए यह जरूरी था कि भारतीयों को किसी ऐसी चीज से बाँधा जाए जो अधिक सूक्ष्म और प्रभावी हो। शिक्षा एक ऐसा ही हथियार था जिसे अंग्रेजों ने भारतीयों को अपना अधीनस्थ बनाने के लिए इस्तेमाल किया। इस संबंध में चिंतक के. दामोदरन की टिप्पणी रेखांकित

करने योग्य है। उन्होंने लिखा था, 'शिक्षा एक ऐसा सूक्ष्म अस्त्र था, जिसे अंग्रेजों ने भारत में अपने प्रभुत्व को सुदृढ़ बनाने के लिए इस्तेमाल किया। यह एक साथ ही भारत के निवासियों को ब्रिटिश सम्राट के प्रति वफादारी में प्रशिक्षित करने और साथ ही जीवन के संबंध में पश्चिमी विचारों और पद्धतियों को प्रचारित करने की एक व्यवस्था थी। अंग्रेजों ने सोचा था कि अंग्रेजी शिक्षा की नई प्रणाली, जिसके अंतर्गत साहित्य, इतिहास तथा विज्ञान की शिक्षा देने की व्यवस्था थी, भारतवासियों में अपने ओछेपन की भावना को जाग्रत करेगी और स्वयं अपनी संस्कृति तथा परंपराओं के प्रति घृणा पैदा करेगी, जो ब्रिटिश शासन के गौरव से जनता के मस्तिष्क को प्रभावित करने के लिए जरूरी है।" लार्ड मैकाले इस विचार को प्रचारित करने वालों में अग्रणी था। उसका विचार था कि भारत और अरब का संपूर्ण ज्ञान यूरोप की एक अच्छी लाइब्रेरी की एक अलमारी में समा सकता है। उनका मूल्य यूरोप के प्राइमरी स्कूलों में इस्तेमाल की जाने वाली पुस्तकों से ज्यादा नहीं है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि सभी अंग्रेज मैकाले की तरह सोचते थे। इसके विपरीत विलियम जोन्स जैसे लोग भी थे जो भारत की प्राचीन परंपरा का मूल्यांकन काफी उच्च रूप में करते थे। लेकिन मैकाले का मकसद भारत में औपनिवेशिक शासन को सुदृढ़ करना था। इसके लिए वह भारतीयों का एक ऐसा वर्ग तैयार करना चाहता था 'जो हमारे और उन लाखों लोगों के बीच जिन पर हम शासन करते हैं दुभाषिये का काम कर सके, ऐसे लोगों का एक वर्ग जिनका रक्त और रंग भारतीय हो, किंतु जो रुचि, विचारों, नैतिकता और बुद्धि की दृष्टि से अंग्रेज हों।' मैकाले और उनके साथी अंग्रेजी शिक्षा के द्वारा भारतीयों में जिस रूपांतरण की आशा कर रहे थे, वैसा कुछ घटित नहीं हुआ। इस पर टिप्पणी करते हुए के. दामोदरन ने सही लिखा कि 'ब्रिटिश नीति में अनिवार्यतः कुछ ऐसे अंतर्विरोध थे जिन्हें सुलझाया नहीं जा सकता था। उसका उद्देश्य था विनाश, किंतु परिणाम हुआ पुनरुज्जीवन। शिक्षा की नई प्रणाली ने प्रयत्न तो किया भारत की आत्मा को कुचल देने का, किंतु वास्तव में वह एक ऐसे आंदोलन के बीज बो रही थी, जिसने अंततः स्वयं ब्रिटिश शासन को ही उखाड़ फेंका।'

जैसे-जैसे अंग्रेजी राज्य का विस्तार हुआ और उनका प्रशासन सुदृढ़ होता गया, वैसे-वैसे उनका भारत की जनता से टकराव भी बढ़ता गया। जमीनों के बंदोबस्त की नयी व्यवस्था, परंपरागत भारतीय उद्योगों को संरक्षण देने की बजाए इंग्लैंड और यूरोप के बने मालों को बेचने के लिए यहाँ के उद्योगों को निर्मूल करने की कोशिश और भारत के विभिन्न धार्मिक समुदायों, विशेष रूप से हिंदुओं और मुसलमानों के विश्वासों और मान्यताओं को अपमानित करने की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कोशिशों ने जनता में असंतोष पैदा किया। इस असंतोष के बढ़ते जाने ने ही 1857 के विद्रोह के लिए जमीन तैयार की। लेकिन इसी बीच अंग्रेजों के संपर्क में आने के कारण शिक्षित वर्ग में इस बात का एहसास भी बढ़ा कि भारतीय अंग्रेजों की तुलना में कई दृष्टियों से पिछड़े हुए हैं। इस वर्ग ने पश्चिमी शिक्षा प्राप्त की थी और उनमें से बहुत से भारत के प्राचीन दर्शन, धर्म और परंपरा का भी अच्छा-खासा ज्ञान रखते थे। उन्होंने आधुनिक विवेकवादी और मानवतावादी दृष्टि से सामंती प्रथाओं और रीतिरिवाजों की आलोचना की और इस बात के लिए लोगों को प्रेरित किया कि यदि वे भारत को भी आधुनिक और प्रगतिशील बनाना चाहते हैं तो उन्हें उन रीति-रिवाजों और रूढ़ियों से नाता तोड़ना होगा जो हमारी प्रगति में बाधक हैं।

इस बात को समझने के लिए हमें यह देखना होगा कि 1757 के बाद जैसे-जैसे अंग्रेजों का शासन सुदृढ़ होता गया वैसे-वैसे उन्होंने विभिन्न रियासतों में बँटे भारत को एक राजनीतिक इकाई में समेटना शुरू किया। यह सामंती भारत के आधुनिक भारत बनने की प्रक्रिया की शुरूआत थी। ऐसा भारत जिसे एक राष्ट्र के रूप में देखा और समझा जा

सकता था। हालाँकि राष्ट्र बनने की यह प्रक्रिया औपनेविशिक शासन के अधीन घटित हो रही थी लेकिन इसने भारतीयों में इस बात का एहसास कराना आरंभ कर दिया कि वे एक राष्ट्र के नागरिक हैं जिनके हित आपस में एक-दूसरे से जुड़े हैं। यह एहसास उस मध्यवर्ग में सबसे पहले प्रकट होना शुरू हुआ जिनमें से अधिकांश जमींदार परिवारों से आते थे और जिन्हें नई अंग्रेजी शिक्षा हासिल करने का अवसर मिला। इन्होंने भारत की तुलना यूरोप से, खासतौर पर भारत पर शासन करने वाले अंग्रेजों के मूल देश ब्रिटेन से करना शुरू किया। उन्होंने वहाँ के शैक्षिक संस्थानों, उद्योगों, प्रशासनिक संस्थानों आदि के कामकाज को देखा। उनके राजनीतिक और सार्वजनिक जीवन को देखा और उसकी भारत के वर्तमान से तुलना की। उन्होंने पाया कि भारत आर्थिक रूप से पिछड़ा हुआ, सामाजिक रूप से रूढ़िवादी और राजनीतिक रूप से बिखरा हुआ है। आर्थिक रूप से पिछड़े होने के पीछे उन्होंने आधुनिक किस्म के उद्योगों की अनुपस्थिति को कारण माना। सामाजिक रूप से रूढ़िवादी होने के जो कारण उन्होंने महसूस किए उनमें शिक्षा का अभाव खासतौर पर स्त्री शिक्षा का पूरी तरह अभाव, स्त्रियों का पर्दे में रहना, बाल विवाह की प्रथा की मौजूदगी, पति के मरने पर स्त्री को दुबारा विवाह करने की अनुमति नहीं होना, पति के मर जाने पर स्त्री को पति के शव के साथ जिंदा जला देना जिसे सती प्रथा के रूप में जाना जाता है और पुरुषों द्वारा बहुविवाह करना, अनमेल विवाह, जाति के आधार पर समाज के ही कुछ तबकों को नारकीय जीवन जीने के लिए मजबूर करना, उनके साथ छुआछूत का बर्ताव करना, उन्हें समाज की मुख्यधारा से अलग-थलग रखना, उन्हें शिक्षा, जमीन और संपत्ति के अधिकार से वंचित रखना, विभिन्न जातियों और धर्मों के बीच खानपान और विवाहादि को बुरा समझना, तरह-तरह के धार्मिक अंधविश्वासों में यकीन रखना आदि ऐसी बहुत-सी बुराइयाँ समाज में प्रचलित थीं जिनके कारण समाज में एकजुटता का अभाव नज़र आता था और प्रगति की संभावनाएँ बहुत सीमित हो गई थीं।

अधिकांश सामाजिक बुराइयों का संबंध हिंदू समाज से था जो भारत की कुल आबादी का तीन चौथाई था। कोई समाज कितना प्रगतिशील है और कितना पिछड़ा हुआ इसका पता उस समाज में स्त्रियों की दशा से लगाया जा सकता है। भारत के दो प्रमुख धर्मों हिंदू और इस्लाम दोनों में स्त्रियों की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। उनको न घर में और न समाज में किसी तरह की स्वतंत्रता और अधिकार प्राप्त थे। उन्हें ऐसे धार्मिक और सामाजिक रिवाजों से बांधा गया था कि वे अपनी इच्छा से कुछ भी कर सकने की स्थिति में नहीं थीं। स्त्री संबंधी बहुत से प्रतिगामी रिवाज सवर्ण हिंदू परिवारों में प्रचलित थे। आरंभ में शिक्षित हिंदू और मुसलमान वर्ग ने अपने-अपने समाजों की बुराइयों की आलोचना प्रस्तुत की और उनमें सुधार लाने का प्रयत्न किया। इस उभरते मध्यवर्ग ने भारतीय समाज में व्याप्त प्रतिगामिता को तीखे रूप में महसूस किया था और उसमें आवश्यक सुधार लाने का बीड़ा उठाया था। समाज में परिवर्तन का काम एक-दो व्यक्तियों द्वारा नहीं बल्कि एक आंदोलन के रूप में हुआ और इसकी व्यापकता पूरे देश में दिखाई दे रही थी इसलिए इसे नवजागरण के आंदोलन के रूप में याद किया जाता है। नवजागरण शब्द इस आंदोलन के लिए किस हद तक सही है यह विवाद का विषय हो सकता है। लेकिन सामाजिक परिवर्तन का जो काम इस दौर में हुआ उसके मुख्य क्षेत्र दो ही थे। एक, धर्म संबंधी सुधार और दूसरा सामाजिक रीति-रिवाज संबंधी सुधार। इस सुधार के लिए उन्होंने सिर्फ विचारों का प्रचार ही नहीं किया बल्कि नई तरह की संस्थाओं का गठन किया, नये ढंग के स्कूल और कॉलेज खोले और पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित कीं। इसी भारतीय नवजागरण की गतिविधियों के बारे में हम अगले भाग में विचार करेंगे।

बोध प्रश्न

दोनों प्रश्नों के उत्तर दो-दो पंक्तियों में दीजिए।

3. मैकाले भारत में अंग्रेजी शिक्षा क्यों फैलाना चाहता था?

....

....

....

....

4. भारतीय मध्यवर्ग ने अंग्रेजों से कौन-सी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात सीखी?

....

....

....

....

1.4 भारतीय नवजागरण

उन्नीसवीं सदी के समाज सुधार आंदोलन को इतिहासकारों ने 'रैनेसां' नाम दिया है। रैनेसां अंग्रेजी का शब्द है जिसका अर्थ है 'पुनर्जागरण'। इसी रैनेसां के लिए डॉ. रामविलास शर्मा ने नवजागरण शब्द का प्रयोग किया है। पुनर्जागरण में दुबारा जागृति का भाव निहित है जबकि नवजागरण में नई जागृति का भाव। नवजागरण आंदोलन में दोनों तरह के भाव मिलते हैं। भारतीय नवजागरण की शुरूआत बंगाल से हुई थी। बंगाल में जमींदार परिवार में जन्मे राजा राममोहन राय (1772-1833) इसके प्रवर्त्तक माने जाते हैं। राजा राममोहन राय ने 1828 में बंगाल में ब्रह्म समाज की स्थापना की थी। महाराष्ट्र में महादेव गोविंद रानाडे द्वारा प्रार्थना समाज की स्थापना की गई और स्वामी दयानंद सरस्वती ने 1875 में आर्य समाज की स्थापना की। इन विभिन्न संस्थानों की स्थापना के पीछे मकसद किसी धार्मिक पंथ की स्थापना करना नहीं था। ये संस्थान धर्म और सामाजिक आचरण का एक नया आदर्श लोगों के सामने प्रस्तुत करना चाहते थे। इन संस्थानों ने शिक्षा और सामाजिक सुधार के क्षेत्र में भी कई महत्त्वपूर्ण शुरूआतें कीं ताकि समय के अनुसार समाज को बदला जा सके। जिन धार्मिक और सामाजिक रूढ़ियों की चर्चा पहले की गई है उनके विरुद्ध जागृति लाने का महत्त्वपूर्ण काम इन समाज सुधारकों ने किया। राजा राममोहन राय ने सती प्रथा के विरुद्ध न केवल लोगों को जागरूक बनाया बल्कि कानून द्वारा प्रतिबंध के लिए भी प्रयास किया और उनकी इन कोशिशों के कारण ही सती प्रथा पर प्रतिबंध लगा। इसी तरह ईश्वरचंद्र विद्यासागर के प्रयासों से विधवा विवाह को कानूनी स्वीकृति मिली। यह सामाजिक आंदोलन का असर था कि बाल विवाह पर रोक लगाने के प्रयास हुए और विवाह की उम्र तय की गई। नवजागरण के आंदोलन ने अनमेल विवाहों को कुछ हद तक रोकने में सफलता पाई थी। बंगाल और दूसरे राज्यों में माता-पिता गरीबी के कारण अपनी बेटियों की ऐसे व्यक्ति के साथ शादी करने के लिए मजबूर हो जाते थे जिनकी उम्र उनकी कन्याओं से बहुत ज्यादा होती थी।

नवजागरण आंदोलन के दौर में स्त्री की मुक्ति का सवाल तो केंद्र में रहा ही, इसके साथ ही जातिप्रथा का विरोध भी एक मुख्य मुद्दा बनकर उपस्थित हुआ। इस आंदोलन के

नेताओं ने इस बात का विरोध किया कि हिंदू समाज में जाति के आधार पर जो विभाजन है वह प्रगति के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। समाज के ही एक वर्ग को दलित समझ कर उनके साथ छुआछूत का व्यवहार करना, उन्हें हर तरह के मानव अधिकारों से वंचित रखना किसी भी तरह से उचित और न्यायपूर्ण नहीं कहा जा सकता। इस सोच का प्रभाव स्वयं दलित जाति के लोगों पर भी दिखाई देने लगा। उन्होंने यदि एक ओर उच्च जातियों के द्वारा किए जाने वाले अमानुषिक भेदभावों का विरोध किया तो दूसरी ओर, अपने समाज की उन्नति के लिए भी प्रयत्न किया। इनमें महाराष्ट्र के ज्योतिबा फुले का नाम सबसे पहले आता है जिन्होंने अपनी पत्नी सावित्री बाई फुले के साथ मिलकर जन जागरण का काम किया। इनमें दूसरा महत्त्वपूर्ण नाम केरल के नारायण गुरु का आता है जिन्होंने जातिप्रथा का विरोध किया और आधुनिक शिक्षा के विकास पर बल दिया। तमिलनाडु के द्रविड आंदोलन ने भी विभिन्न जातियों के बीच एकता और निम्न और पिछड़ी समझी जाने वाली जातियों के उत्थान के लिए जन जागृति का कार्य किया।

नवजागरण के अग्रदूतों ने दूसरा महत्त्वपूर्ण काम यह किया कि उन्होंने शिक्षा, विशेष रूप से आधुनिक शिक्षा का प्रचार किया। इसके लिए नए तरह के संस्थान स्थापित किए गए। कई कॉलेज और स्कूल खोले गए। उन्होंने इस बात को भी महसूस किया कि स्त्रियों को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराने के लिए उन्हें शिक्षित करना बहुत जरूरी है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए स्त्री शिक्षा प्रदान करने के लिए लड़कियों के लिए स्कूल खोले गए। इस क्षेत्र में ईश्वरचंद्र विद्यासागर और महाराष्ट्र के ज्योतिबा फुले का योगदान सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। महात्मा फुले का संबंध जिस जाति से था, उसे हिंदू समाज में पिछड़ी जाति माना जाता था। उन्होंने सबसे पहले अपनी पत्नी सावित्री बाई फुले को शिक्षा प्रदान की और फिर अपनी पत्नी की मदद से दलित वर्ग की लड़कियों को शिक्षित करने का कार्य किया। महात्मा फुले ने जातिप्रथा, बाल विवाह और अनमेल विवाह जैसी कई बुराइयों को खत्म करने के लिए प्रयास किए। फुले ने सत्यशोधक मंडल नामक सामाजिक संस्था भी स्थापित की। शिक्षा का प्रचार-प्रसार करने में स्वामी दयानंद सरस्वती और उनके आर्य समाज ने भी योगदान दिया। पंजाब और उसके आसपास के प्रांतों में आर्यसमाज द्वारा स्थापित दयानंद वर्नाक्युलर शिक्षा संस्थानों ने स्कूली और महाविद्यालयी स्तर की आधुनिक शिक्षा उपलब्ध कराने का काम किया।

नवजागरण के दौरान कई पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित की गईं। उन्होंने लोगों को इस बात के लिए प्रेरित किया कि वे अपने और समाज के बारे में तर्क और बुद्धि के अनुसार विचार करें। किसी बात को सिर्फ इसलिए न मान लें कि ऐसा धार्मिक पुस्तकों में लिखा है या परंपरा से होता आया है। नवजागरण ने एक हद तक धर्म को मानव जीवन के केंद्र से हटाकर मानव और उसके लौकिक हितों को केंद्र में रखा। यह एक महत्त्वपूर्ण प्रस्थान बिंदु था। नवजागरण के दौर के आंदोलनों में धर्म की भूमिका पर विचार करते हुए 'भारत का स्वतंत्रता संघर्ष' नामक पुस्तक में प्रख्यात इतिहासकार विपिन चंद्र और अन्य इतिहासकारों ने लिखा था, 'हालाँकि इन आंदोलनों का ज्यादा जोर धार्मिक सुधारों की तरफ ही था, फिर भी इनमें से किसी भी आंदोलन का चरित्र पूरी तरह धार्मिक नहीं था। इनकी अंतःप्रेरणा थी मानववाद। परलोक और मोक्ष जैसी बातें इनका मुद्दा नहीं थीं, बल्कि इनका सारा जोर इहलौकिक अस्तित्व पर था।'

नवजागरण आंदोलन के कारण जो नवीन चेतना जागृत हो रही थी उसने साहित्य पर भी गहरा असर डाला। इस दौर के लेखकों ने भारत की आधुनिक भाषाओं में नवजागरण के दौर के सामाजिक और राष्ट्रीय मुद्दों को अपने साहित्य का विषय बनाया। पश्चिमी साहित्य के संपर्क में आने के कारण और प्रेस की स्थापना ने साहित्य में गद्य की नयी

विधाओं जैसे उपन्यास, कहानी, निबंध आदि में रचना करने की प्रेरणा दी तो नाटक जैसी पुरानी विधा जो मध्ययुग में शिथिल पड़ गई थी उसका पुनरुद्धार हुआ।

नवजागरण का यह आंदोलन सिर्फ हिंदुओं तक सीमित नहीं था। मुसलमानों में नवजागृति पैदा करने का प्रयत्न भी हुआ। इस्लाम धर्म में आरंभ से ही कट्टरपंथी और उदारपंथी दोनों तरह की धाराओं का अस्तित्व रहा है। सूफी परंपरा इस्लाम के उदारपंथ का प्रतिनिधित्व करती है जिसका प्रभाव भारत के मुसलमानों और हिंदुओं दोनों पर दिखाई देता है। सूफ़ी संतों और कवियों ने हिंदुओं और मुसलमानों के बीच धार्मिक और सांस्कृतिक एकता को विकसित करने में अहम भूमिका निभाई है। हिंदुओं और मुसलमानों की एकता का ही परिणाम है कि औपनिवेशिक शासन के दौरान अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष में दोनों एकजुट होकर लड़े। 1857 का महासंग्राम इसका प्रमाण है। नवजागरण के दूसरे नेताओं की तरह सर सैयद अहमद खां (1817-1898) भी अंग्रेजों के समर्थक थे लेकिन उन्होंने मुसलमानों में आधुनिक चेतना जगाने का अत्यंत महत्वपूर्ण काम किया। वे चाहते थे कि मुसलमान आधुनिक शिक्षा ग्रहण कर प्रगति करे और रूढ़िवाद और अंधविश्वासों से अपने को दूर रखे। उन पर यूरोपीय सभ्यता और संस्कृति का गहरा असर था। मुसलमानों को आधुनिक शिक्षा प्रदान करने के लिए उन्होंने 1873 में मोहम्मडन एंग्लो-ओरियंटल कालेज की स्थापना की। यह कालेज ही आगे चलकर अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के नाम से विख्यात हुआ। सर सैयद अहमद खां द्वारा शुरू किए गए जनजागरण को अलीगढ़ आंदोलन के नाम से जाना जाता है। के. दामोदरन ने इस आंदोलन पर टिप्पणी करते हुए लिखा था, "अपने धार्मिक और सांप्रदायिक स्वरूप के बावजूद अलीगढ़ आंदोलन ने मुल्लाओं और उलमा की शक्ति को कमजोर करने में मदद की और, अंतिम विश्लेषण में, भारत में सामंतवाद के प्रभुत्व को कमजोर करने में सहायता पहुंचायी।"

बोध प्रश्न

5. भारतीय नवजागरण के दौरान स्थापित निम्नलिखित संस्थाओं को उनके प्रवर्त्तकों के नाम के साथ मिलाइए।

क. सर सैयद अहमद खां	1. सत्यशोधक मंडल
ख. राजा राममोहन राय	2. प्रार्थना समाज
ग. महादेव गोविंद रानाडे	3. ब्रह्म समाज
घ. ज्योतिबा फुले	4. अलीगढ़ आंदोलन

6. स्त्रियों की सामाजिक दशा में सुधार लाने के लिए किन-किन क्षेत्रों में प्रयत्न किए गए? सिर्फ नामों का उल्लेख कीजिए।

1.5 हिंदी नवजागरण

उन्नीसवीं सदी में हिंदी भाषी प्रदेशों में जो समाज सुधार आंदोलन हुआ उसे डॉ. रामविलास शर्मा ने हिंदी नवजागरण नाम दिया है। बंगाल और दूसरे प्रदेशों से हिंदी नवजागरण की भिन्नता यह है कि यह मुख्यतः साहित्यकारों द्वारा चलाया गया आंदोलन है और जनता में नई जागृति के लेखकों ने अपनी पत्रिकाओं और पुस्तकों के माध्यम से लाने का प्रयास किया। वैसे हिंदी प्रदेशों में भी आर्य समाज और बंगाल के नवजागरण का प्रभाव पड़ा था। स्वयं भारतेंदु हरिश्चंद्र बंगाल के नवजागरण के नेताओं के सीधे संपर्क

में थे। इसके बावजूद यह सच है कि हिंदी प्रदेश में राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, महादेव गोविंद रानाडे, ज्योतिबा फुले, नारायण गुरु, दयानंद सरस्वती जैसा कोई नेता नहीं हुआ। सर सैयद अहमद खाँ ने जरूर इस प्रदेश में उसी तरह का काम किया जो बंगाल, महाराष्ट्र आदि राज्यों के समाज सुधारकों ने किया था। लेकिन उनका प्रभाव सिर्फ मुसलमानों तक सीमित था। नवजागरण का यह एक दुर्भाग्यपूर्ण पहलू है कि उन्नीसवीं सदी के सभी समाज सुधारक सिर्फ अपने धर्मावलंबियों के बीच ही कार्य करते रहे।

आर्यसमाज से प्रभावित होकर कुछ सुधारकों ने पंजाब से लेकर बिहार तक के क्षेत्र में समाज सुधार का काम जरूर किया था। आर्यसमाज का सबसे अधिक प्रभाव भी इसी क्षेत्र पर दिखाई देता है। आर्यसमाज की सीमा यह थी कि यह एक पुनरुत्थानवादी आंदोलन था। हालाँकि आर्यसमाज ने धार्मिक अंधविश्वासों और सामाजिक रूढ़ियों को दूर करने में अहम भूमिका निभाई।

हिंदी नवजागरण की शुरूआत भारतेंदु युग से मानी जाती है। भारतेंदु (1850-1885) का संबंध बनारस के एक अत्यंत प्रतिष्ठित व्यावसायिक परिवार से था। साहित्य से लगाव उनको अपने परिवार से विरासत में मिला था। उन्होंने 18 वर्ष की आयु में हिंदी में 'कविवचन सुधा' नामक साहित्यिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। बाद में उन्होंने 'हरिश्चंद्र मैगज़ीन' नामक पत्रिका निकाली जिसका नाम बाद में बदलकर 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' कर दिया गया। स्त्री शिक्षा और जागृति के लिए उन्होंने 'बालाबोधिनी' नामक पत्रिका का भी प्रकाशन किया। भारतेंदु ने हिंदी भाषा और साहित्य को नया स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया। वह स्वयं तो साहित्यकार थे ही, साथ ही उन्होंने बहुत से युवाओं को साहित्य की ओर प्रेरित किया। भारतेंदु से प्रेरणा लेकर साहित्य रचना करने वाले और साहित्यिक गतिविधियों में सक्रिय रहने वाले लेखकों को भारतेंदु मंडल के नाम से जाना जाने लगा। उनके समकालीन कई लेखकों ने भी विभिन्न पत्रिकाओं का प्रकाशन किया। भारतेंदु युग के साहित्य के बारे में आप विस्तार से भारतेंदु युग वाले अध्याय में पढ़ेंगे। यहाँ हम सिर्फ इस बात पर प्रकाश डालेंगे कि भारतेंदु युग ने नवजागरण में किस तरह का योगदान किया।

भारतेंदु युग के लेखकों ने अपनी पत्रिकाओं और साहित्य के माध्यम से समाज में नई जागृति लाने का प्रयास किया। उन्होंने समाज में व्याप्त कुप्रथाओं का विरोध किया। इनमें बाल विवाह, सती प्रथा, अनमेल विवाह आदि का विरोध शामिल था। इसके साथ ही उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन किया। स्त्री शिक्षा की ज़रूरत पर बल दिया। धार्मिक कुरीतियों और अंधविश्वासों की भी आलोचना की। यह अवश्य है कि हिंदी के लेखकों पर पुनरुत्थानवाद का गहरा असर था। भारतेंदु युग के अधिकांश लेखकों ने गौ रक्षा, हिंदू एकता और उर्दू के विरुद्ध हिंदी का पक्ष लिया। भारतेंदु युग के ही एक लेखक प्रतापनारायण मिश्र ने हिंदी को हिंदुओं के साथ जोड़ते हुए 'हिंदू, हिंदी, हिंदुस्तान' का नारा दिया। लेकिन जल्दी ही इन लेखकों ने यह भी पहचान लिया था कि भारत की प्रगति तभी संभव है जब यहाँ के लोगों में एकता और आपसी सौहार्द्र हो। भारतेंदु युग के लेखक भी देश की प्रगति के समर्थक थे और भारत को आधुनिक राष्ट्र बनाना चाहते थे। भारतेंदु ने उद्योगीकरण की आवश्यकता पर बल दिया था। समाज को बदलने और उसे प्रगति की राह पर ले जाने के लिए उन्होंने साहित्य को माध्यम बनाया। इसके लिए उन्होंने साहित्य के परंपरागत रूपों को त्यागते हुए नए रूपों में साहित्य रचना की। उन्होंने गद्य में लेखन किया। नाटक लिखे और कविता में श्रृंगार और भक्ति के साथ-साथ राजनीतिक और सामाजिक विषयों पर भी रचना की। तत्कालीन मध्यवर्ग के अनुरूप

भारतेंदु युग के हिंदी लेखक भी इस बात में यकीन करते थे कि अंग्रेज ही भारत को एकसूत्र में बाँधे रख सकते हैं और उसे प्रगति की राह पर आगे बढ़ा सकते हैं। यही कारण है कि उनमें राजभक्ति की भावना काफी मजबूत थी। लेकिन धीरे-धीरे उन्हें यह भी एहसास होने लगा था कि अंग्रेजों का मकसद भारत को लूटना है। इस धारणा के बलवती होते जाने के साथ उनमें राष्ट्रीयता की भावना भी प्रबल होती गई।

बोध प्रश्न

7. निम्नलिखित में से कौन-सा कथन हिंदी के तत्कालीन लेखकों पर लागू नहीं होता।

    क. पुनरुत्थानवाद का प्रभाव

    ख. बाल विवाह, अनमेल विवाह आदि का विरोध

    ग. उर्दू का समर्थन

    घ. उद्योगीकरण का समर्थन

8. हिंदी नवजागरण का श्रेय किसे दिया जाता है?

    क. रामविलास शर्मा को

    ख. दयानंद सरस्वती को

    ग. राजा राममोहन राय को

    घ. भारतेंदु युग के लेखकों को

1.6 स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास

पंद्रहवीं-सोलहवीं सदी से भारत में यूरोपीय कंपनियाँ व्यापार के लिए आने लगी थीं जिनमें पुर्तगाली, डच, फ्रांसीसी और ब्रिटिश कंपनियाँ शामिल थीं। इन सभी कंपनियों को उनके देशों की सरकारों का समर्थन हासिल था। इन देशों की सरकारों ने उन्हें सेना रखने और शासन चलाने तक का अधिकार दे रखा था। भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी, जो एक ब्रिटिश कंपनी थी, का आगमन सत्रहवीं सदी में हो गया था। व्यापार के साथ-साथ ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपना राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित करने की कोशिश भी की। इसके लिए उन्होंने कूटनीति और युद्धों का सहारा लिया। जैसाकि पहले कहा जा चुका है कि अंग्रेजों के साम्राज्य की शुरूआत 1757 के प्लासी के युद्ध में नवाब सिराजुद्दौला की हार के साथ हुई। इसके लगभग सौ साल बाद तक विभिन्न रियासतों के शासकों की आपसी लड़ाई का लाभ उठाकर उन्होंने धीरे-धीरे हिंदुस्तान के अधिकांश हिस्से पर कब्जा कर लिया। 1857 तक लगभग पूरे हिंदुस्तान पर अंग्रेजों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष अधिकार हो गया था। लेकिन इसका अर्थ नहीं था कि अंग्रेजों को विजय आसानी से मिलती गई। अंग्रेजों को लगातार भारतीय प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। न केवल विभिन्न राज्यों के शासकों की तरफ से बल्कि आदिवासियों, किसानों और दूसरे लोगों की तरफ से भी अंग्रेजी शासकों को प्रतिरोध झेलना पड़ा। लगातार चलने वाले विद्रोहों की परिणति 1857 के महाविद्रोह में हुई जब स्वयं ईस्ट इंडिया कंपनी के भारतीय सैनिकों ने ही अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का झंडा बुलंद कर दिया। भारतीय सिपाहियों ने इसकी शुरूआत 11 मई 1857 को मेरठ से की थी जहाँ के अंग्रेज अफसरों और उनके वफादार सैनिकों को परास्त कर उन्होंने दिल्ली की तरफ कूच किया और दिल्ली पर अधिकार कर लिया। भारतीय

सिपाहियों ने अंतिम मुगल बादशाह बहादुरशाह ज़फ़र को भारत का शासक घोषित किया और अंग्रेजों को पूरे भारत से खदेड़ने का अभियान चलाया। पंजाब से लेकर बंगाल तक भारतीय सिपाहियों ने देशी सामंतों, जमींदारों, किसानों और नागरिकों के साथ मिलकर अंग्रेजों से लोहा लिया। कार्ल मार्क्स ने भारतीयों के इस संघर्ष को भारत की स्वतंत्रता का पहला संघर्ष बताया था। दिल्ली चार महीने से अधिक समय तक विद्रोही भारतीय सिपाहियों के नियंत्रण में रही। लेकिन अंग्रेज आखिरकार दिल्ली पर दुबारा कब्जा करने में कामयाब हो गए। कई भारतीय सामंतों ने इस संग्राम में अंग्रेजों की मदद की थी। 1857 के प्रमुख योद्धाओं में तात्या टोपे, नाना फड़नवीस, झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई, जीनतमहल, कुंवर सिंह को आज भी भारत की जनता श्रद्धापूर्वक याद करती है। इनके अलावा मंगल पांडे, झलकारी बाई, मातादीन, गंगू बाबा आदि का नाम भी 1857 के जननायकों में गिना जाता है।

1857 के साथ ही भारत से ईस्ट इंडिया कंपनी का राज हमेशा-हमेशा के लिए खत्म हो गया। भारत सीधे अंग्रेजी सत्ता के अधीन आ गया। 1857 के महाविद्रोह में भारतीयों की हार भले ही हो गई हो, लेकिन अंग्रेजी सत्ता से उनका संघर्ष समाप्त नहीं हुआ। भारत की जनता विशेष रूप से किसान और आदिवासी अंग्रेजों के विरुद्ध अपना संघर्ष चलाते रहे। संथाल विद्रोह के एक ऐसे ही नेता बिरसा मुंडा थे।

अंग्रेजों के शासन के दौरान भारत में सीमित ही सही उद्योगीकरण की शुरूआत हुई। नई शासन व्यवस्था ने जो नया मध्यवर्ग पैदा किया वह अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त था। एक अंग्रेज अधिकारी लार्ड मैकाले ने इस अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त वर्ग से उम्मीद की थी कि वह अंग्रेजी सत्ता का समर्थक होगा। यह वर्ग अंग्रेजी सत्ता का समर्थक तो था, लेकिन वह अंग्रेजी सत्ता से भारतीयों के प्रति बेहतर व्यवहार की उम्मीद करता था। यह वर्ग ज्यादा स्वतंत्रता की आकांक्षा रखता था। वह उनसे उसी व्यवहार और वैसे ही अधिकार की आशा करता था जो ब्रिटेन में ब्रिटिश नागरिकों को मिले हुए थे। भारतीय मानते थे कि वे भी ब्रिटिश की महारानी की वैसी ही प्रजा है। इसी की माँग वे लगातार करते रहे। लेकिन जब उनकी आवाज नहीं सुनी गई तो उन्होंने 1885 में एक राजनीतिक संगठन की स्थापना की जो अंग्रेजी सत्ता का समर्थक तो था लेकिन जो भारतीयों की तरफ से अधिक अधिकारों की माँग के लिए बनाया गया था। इस संगठन को भारतीय कांग्रेस नाम दिया गया। एक अंग्रेज 'मिस्टर ह्यूम' को उसका अध्यक्ष बनाया गया। इस प्रकार कांग्रेस भारतीयों का पहला ऐसा संगठन था जिसने हिंसा का सहारा लेने की बजाए लोकतांत्रिक तरीके से अपनी माँगों के लिए आंदोलन करने का रास्ता अपनाया। आरंभ में कांग्रेस के नेताओं ने प्रार्थना के जरिए ही अपनी माँगें अंग्रेजी सत्ता के सामने रखीं। यह सिलसिला लगभग तीन दशकों तक चला। लेकिन जब उसका कोई खास नतीजा नहीं निकला और भारतीयों की स्वतंत्रता की आकांक्षा को अंग्रेज लगातार कुचलते रहे तो कांग्रेस में ही नेताओं की एक नई पीढ़ी सामने आई जिन्होंने चिट्ठी-पत्री लिखने की बजाए जनता को एकजुट कर अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष करने का निश्चय किया। अब तक कांग्रेस का संबंध मध्यवर्ग से ही था। लेकिन अब कांग्रेस ने किसान और मजदूर जनता को भी अपने आंदोलन में शामिल करने का फैसला किया। 1908 में पहली बार अपनी माँगों के लिए मजदूरों ने हड़ताल का सहारा लिया। कांग्रेस के वे नेता जो चिट्ठी-पत्री द्वारा अपनी माँगें माने जाने की आशा कर रहे थे जिनमें दादा भाई नौरोजी, बदरुद्दीन तैयबजी, गोपालकृष्ण गोखले जैसे नेता थे और जिन्हें इतिहास में नरमदल का नेता माना जाता था, उनकी जगह पर बालगंगाधर तिलक, लाला लाजपतराय, विपनचंद्र पाल आदि नेताओं की एक

नयी पीढ़ी सामने आई जिन्हें गरम दल के रूप में जाना जाता था। इन नेताओं ने जनआंदोलनों का तरीका अपनाया और 1857 के बाद पहली बार कांग्रेस के नेतृत्व में जनता की व्यापक भागीदारी के साथ आजादी के आंदोलन ने एक नए चरण में प्रवेश किया।

गरमदल ने कांग्रेस को एक नई ऊर्जा प्रदान की। उसने जन आंदोलनों की शुरूआत भी की फिर भी कांग्रेस का आंदोलन अब भी मध्यवर्ग तक ही सीमित था। यही वजह थी कि कांग्रेस ने जनता के सवालों को अपनी माँगों में शामिल नहीं किया। आजादी की लड़ाई में व्यापक किसान जनता को शामिल करने का जरूरी काम महात्मा गाँधी के प्रवेश के साथ हुआ। दक्षिण अफ्रीका से लौटने के बाद उन्होंने एक साल तक घूम-घूमकर पूरे भारत को देखा और समझा। इसके बाद उन्होंने बिहार के चंपारण से किसानों की माँगों के साथ आजादी के आंदोलन में अपनी भागीदारी की शुरूआत की। किसानों को आजादी के आंदोलन से जोड़ने का परिणाम यह हुआ कि स्वतंत्रता संघर्ष भारत के गाँव-गाँव तक पहुँच गया। इस समय तक जवाहरलाल नेहरू के साथ युवाओं की एक नयी पीढ़ी भी इस लड़ाई में कूद पड़ी थी। इन युवाओं में आजादी के लिए संघर्ष करने और उसके लिए हर तरह के बलिदान की भावना थी। इन युवाओं पर 1917 में रूस में हुई बोल्शेविक क्रांति का भी जबर्दस्त असर था। इस क्रांति के द्वारा रूस में समाजवाद की स्थापना हुई। समाजवादी व्यवस्था की स्थापना करना भारत के युवाओं का स्वप्न बन गया। आजादी की लड़ाई में शामिल नई पीढ़ी यह तो समझ रही थी कि व्यापक जन आंदोलन के बिना आजादी का सपना पूरा नहीं हो सकता। लेकिन इसके साथ ही उनमें यह भावना भी प्रबल होती जा रही थी कि केवल अहिंसक रास्तों से ही अंग्रेजों को सत्ता से नहीं हटाया जा सकता। यह भावना 1919 में बैसाखी के दिन अंग्रेजों द्वारा अमृतसर के जलियाँवाला बाग में निहत्थे भारतीयों पर चारों ओर से की गई गोलीबारी से और तीव्र हो गई। इस गोलीबारी में सरकारी आँकड़ों के अनुसार भी पाँच सौ से अधिक लोग मारे गए। इन मरने वालों में बूढ़े, औरतें और बच्चे भी शामिल थे। इस घटना से क्षुब्ध होकर रवींद्रनाथ टैगोर ने अंग्रेजों द्वारा मिली नाइटहुड की उपाधि वापस लौटा दी। 1920-30 के दशकों में भारत में अंग्रेजी हिंसा का प्रतिरोध करने के लिए कई क्रांतिकारी संगठन अस्तित्व में आए और उन्होंने अंग्रेजी दमन का मुकाबला किया।

इन क्रांतिकारियों में ही रामप्रसाद बिस्मिल, असफाकुल्लाह, चंद्रशेखर आजाद, भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव आदि भी थे। रामप्रसाद बिस्मिल और असफाकुल्लाह को उनकी क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए फाँसी दे दी गई। कई क्रांतिकारियों को अंडमान-निकोबार द्वीप पर भेज दिया जाता था जहाँ अंग्रेजों ने भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों को कैद रखने के लिए जेल का निर्माण किया था। इस जेल को सेलुलर जेल के नाम से जाना जाता था। पंजाब के स्वतंत्रता सेनानी लाला लाजपत राय जब प्रदर्शन के दौरान पुलिस की लाठी से घायल हो गए और थोड़े दिनों बाद उनकी मौत हो गई तो इस घटना से विचलित होकर भगत सिंह और उनके साथियों ने पुलिस के अधिकारी सांडर्स को मार गिराया। इसके कुछ दिन बाद सारी दुनिया को भारत की आजादी के संघर्ष के प्रति जागरूक करने के लिए भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने केंद्रीय असेंबली में बम का धमाका किया। इन क्रांतिकारियों का इरादा किसी को मारना नहीं था। यही वजह है कि उन्होंने ऐसा ही बम फोड़ा जिससे किसी को मामूली सी चोट भी नहीं आई। भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त बम फोड़कर भागे नहीं बल्कि वहीं खड़े रहकर उन्होंने इंकलाब जिंदाबाद के नारे लगाए और पर्चे बाँटे। उन दोनों को गिरफ्तार कर लिया गया। थोड़े

दिनों बाद अन्य क्रांतिकारी भी एक-एक कर पकड़े गए। भगतसिंह और दूसरे क्रांतिकारियों पर मुकदमा चलाया गया। भगतसिंह, राजगुरू और सुखदेव को फांसी की सजा हो गई, अन्य क्रांतिकारियों को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। चंद्रशेखर आजाद पकड़े नहीं जा सके लेकिन इलाहाबाद में पुलिस के साथ मुठभेड़ में वे मारे गए।

कांग्रेस में शामिल समाजवादियों, क्रांतिकारी संगठनों और कम्युनिस्ट पार्टी के अस्तित्व में आने ने पूरे देश में इस सवाल को अहम बना दिया कि आजाद भारत किस तरह का होना चाहिए। इस बहस का नतीजा था कि कांग्रेस ने 1930 में पूर्ण आजादी की माँग रखी। जनता को इस बात का विश्वास दिलाया गया कि आजाद भारत में जमींदारी प्रथा खत्म कर दी जाएगी और भूमि सुधार को अमली जामा पहनाया जाएगा। लेकिन आजादी के इस चरण में दो महत्त्वपूर्ण मुद्दे और उभरकर आए। भारत की बहुसंख्यक हिंदू जनता में जातिवाद बहुत गहरे रूप में समाया हुआ था। नवजागरण के दौरान जातिवाद के विरोध में चलाए गए आंदोलनों, अंग्रेजों की जातिवाद विरोधी नीतियों और स्वयं दलित वर्ग में उभर रहे मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों द्वारा चलाए जा रहे आंदोलनों ने इस बात को मुख्य मुद्दा बना दिया कि निम्न समझी जाने वाली जातियों का आजादी के बाद क्या उसी तरह शोषण किया जाएगा? क्या उनके साथ वैसा ही अमानुषिक व्यवहार किया जाएगा? यह एक ऐसा मुद्दा था जिसका राजनीतिक लाभ उठाने की कोशिश अंग्रेजी सत्ता ने की। 1932 में अंग्रेजों ने दलित जातियों के लिए अलग निर्वाचन मंडलों की व्यवस्था की। कांग्रेस ने इसका विरोध किया। कांग्रेस का कहना था कि उनका संगठन सारे हिंदुस्तान का प्रतिनिधित्व करता है। इस मसले को लेकर गाँधी जी उपवास पर बैठ गए। अंततः गाँधी जी और बाबा साहब अंबेडकर के बीच पुणे में एक समझौता हुआ जिसे पूना पैक्ट के नाम से जाना जाता है। इस घटना के बाद से दलित जातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए प्रयत्न करना एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा बन गया। साथ ही इस बात का वचन दिया गया कि आजाद भारत में दलित जातियों के साथ किसी भी तरह का भेदभाव नहीं किया जाएगा और उनको सभी नागरिक अधिकार प्राप्त होंगे।

भारत में वैसे तो कई धार्मिक समुदाय सदियों से रहते आए हैं लेकिन हिंदुओं के बाद सबसे बड़ा धार्मिक समुदाय इस्लाम धर्मावलंबियों का था। हिंदुओं की तुलना में अल्पसंख्यक होते हुए भी मुसलमानों की आबादी बहुत अधिक थी। 1857 की लड़ाई हिंदुओं और मुसलमानों ने मिलकर लड़ी थी। इस घटना से सबक लेते हुए अंग्रेजों ने इन दोनों समुदायों के बीच फूट डालने की हर संभव कोशिश की जिसमें वे कुछ हद तक कामयाब भी हुए। अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना से पहले भारत में मुस्लिम शासकों का राज था। इसलिए मुसलमानों के एक वर्ग में अंग्रेज इस धारणा को बलवती करने में सफल हुए कि यदि आजादी के बाद कांग्रेस का शासन हुआ तो मुसलमानों के साथ बराबरी का व्यवहार नहीं किया जाएगा क्योंकि कांग्रेस हिंदुओं की पार्टी है। यह बात सही नहीं थी। कांग्रेस अपनी स्थापना के समय से ही सभी भारतीयों का प्रतिनिधित्व करती रही थी। एक और कारण यह भी था कि मुस्लिम जमींदारों में यह भी डर समाया हुआ था कि जब देश आजाद हो जाएगा तो कांग्रेस, जैसा कि 1930 में घोषित कर चुकी थी कि वह जमींदारी प्रथा समाप्त कर देगी। इससे मुस्लिम भूस्वामी वर्ग को अपने वजूद के मिट जाने का खतरा पैदा हो गया। इस प्रकार मुसलमानों में अलगाव की भावना पैदा करने की कोशिश की गई। मुस्लिम लीग ने इसी समझ के तहत मुसलमानों के लिए अलग राज्य की माँग की। इसने हिंदुओं और मुसलमानों के बीच दूरियाँ बढ़ाई। दोनों तरफ के सांप्रदायिक संगठनों ने जनता के बीच सांप्रदायिक विभाजन को बढ़ाने में मदद की। इन बढ़ती दूरियों ने सांप्रदायिक दंगे करवाए और अंततः 1947 में देश आजाद हुआ तो धर्म

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

के आधार पर उसका विभाजन भी हो गया। आजादी के साथ यह महान देश भारत और पाकिस्तान के रूप में दो देशों में बँट गया।

1.7 स्वाधीनता आंदोलन की परिणति

लगभग दो सौ साल की गुलामी के बाद 15 अगस्त 1947 को भारत औपनिवेशिक दासता से मुक्त हो गया। इसके साथ ही एक नया देश पाकिस्तान अस्तित्व में आ गया। भारत आजाद तो हो गया लेकिन इस आजादी की भारी कीमत चुकानी पड़ी। विभाजन ने लाखों लोगों को विस्थापित होने के लिए मजबूर कर दिया। इस दौरान हुए दंगों में हजारों-हजार लोग मारे गये।

विभाजन के बावजूद भारत ने धर्मनिरपेक्षता का रास्ता नहीं छोड़ा। भारत का जो नया संविधान बना उसने सभी भारतीय नागरिकों को यह वचन दिया कि उनके साथ धर्म, जाति, नस्ल, लिंग, भाषा आदि के आधार पर किसी तरह का भेदभाव नहीं किया जाएगा। राज्य का कोई धर्म नहीं होगा और सभी धर्मों के प्रति समान भाव रखा जाएगा। आजाद भारत ने एक ऐसी व्यवस्था अपनाई जिसमें दलितों, आदिवासियों और अन्य पिछड़े समूहों के विकास के लिए विशेष कदम उठाए गए। इस तरह भारत एक धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में उभरकर विश्व के सामने उपस्थित हुआ। भारत की आजादी की लड़ाई ने औपनिवेशिक दासता से जकड़े देशों को संघर्ष की प्रेरणा दी और उनकी आजादी का मार्ग भी प्रशस्त हुआ।

बोध प्रश्न

सभी प्रश्नों के उत्तर एक-दो वाक्यों में दीजिए।

9. कांग्रेस की स्थापना क्यों की गई?

....

....

....

....

10. नरमदल और गरमदल में मुख्य अंतर क्या है?

....

....

....

....

11. आजादी की लड़ाई की कीमत देश को किस रूप में चुकानी पड़ी?

....

....

....

12. नवजागरण का तात्पर्य स्पष्ट करते हुए समाजसुधार में उसके योगदान पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

....

13. हिंदी नवजागरण का परिचय देते हुए उसके महत्त्व का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

14. आजादी की लड़ाई में महात्मा गाँधी की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

....

1.8 सारांश

इस इकाई में आपने नवजागरण और स्वाधीनता संघर्ष के बारे में अध्ययन किया है। सत्रहवीं सदी में यूरोप की व्यापारिक कंपनियाँ भारत में व्यापार के लिए आईं। इनमें ब्रिटेन की ईस्ट इंडिया कंपनी भी थी। 1757 के प्लासी के युद्ध में नवाब सिराजुद्दौला को हराकर अंग्रेजों ने भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की नींव रखी। अंग्रेजों ने भारत को राजनीतिक रूप से ही अपने अधीन नहीं किया बल्कि वे यहाँ ऐसी शासन व्यवस्था भी कायम करना चाहते थे जिसे भारतीय अपने उद्धारक के रूप में ग्रहण करें। वे शिक्षित भारतीयों का ऐसा वर्ग पैदा करना चाहते थे जो रक्त और मांस से तो भारतीय हो लेकिन अपनी सोच में वे पूरी तरह से अंग्रेज हों। लेकिन अंग्रेज भारत की संपदा का जिस तरह दोहन कर रहे थे और यहाँ के लोगों के साथ जिस तरह का अत्याचार कर रहे थे, उससे यह मुमकिन ही नहीं था कि भारतीय अंग्रेजों के शासन को वरदान के रूप में लेते। भारतीयों ने आरंभ से ही अंग्रेजों को यहाँ से खदेड़ने का प्रयास किया। यहाँ के किसान, आदिवासी और दूसरे समुदायों ने इसके लिए निरंतर संघर्ष किया। इन संघर्षों की परिणति 1857 के महाविद्रोह में हुई। इसे भारत का पहला स्वतंत्रता संग्राम कहा गया। लेकिन भारतीय इस संग्राम को जीत नहीं सके।

अंग्रेजों के संपर्क में आने से भारत पर कुछ सकारात्मक असर भी पड़ा। भारतीयों को इस बात का एहसास हुआ कि उनके सामाजिक जीवन में कई बुराइयाँ घर कर गई हैं। धार्मिक अंधविश्वास और रूढ़िवाद, सामाजिक कुप्रथाएँ मसलन, पर्दा प्रथा, बाल विवाह, अनमेल विवाह, सती प्रथा, जातिप्रथा, छुआछूत, अशिक्षा, वैधव्य आदि ऐसी ही बुराइयाँ थीं

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

जिनसे मुक्ति के बिना भारत तरक्की नहीं कर सकता था। नवजागरण के पुरोधाओं ने विभिन्न सामाजिक और धार्मिक संगठन बनाकर भारतीयों को मध्ययुगीन रूढ़ियों से मुक्त कराने की कोशिश की। इसी के नतीजतन भारत आज कई सामाजिक बुराइयों से काफी हद तक मुक्त हो चुका है। भारतीयों ने इसी दौर में इस बात को समझा कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी का कितना महत्व है और बिना उद्योगीकरण के भारत दूसरे देशों के समकक्ष नहीं पहुंच सकता। इसके लिए व्यापक शिक्षा का प्रसार जरूरी है।

इस नई चेतना ने ही भारतीयों को इस बात का एहसास कराया कि हम एक राष्ट्र हैं, स्वतंत्रता और संप्रभुता हमारा लक्ष्य है और इसे हम हर हाल में हासिल करके रहेंगे। 1885 में कांग्रेस की स्थापना ने भारतीयों की आजादी की महत्वाकांक्षा को पूरा करने का एक मंच प्रदान किया। आजादी की लड़ाई में कांग्रेस ने सदैव अग्रणी भूमिका निभाई। इसने दादा भाई नौरोजी, गोपालकृष्ण गोखले, बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, सुभाषचंद्र बोस, मौलाना अबुलकलाम आजाद, सरोजिनी नायडू जैसे महान नेता दिए। आजादी की लड़ाई में क्रांतिकारियों का भी योगदान अविस्मरणीय है।

आजादी की लड़ाई सिर्फ राजनीतिक मुक्ति की लड़ाई नहीं थी बल्कि आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मुक्ति की भी लड़ाई थी। आजादी की लड़ाई के दौरान भारतीय समाज के कई अंतर्विरोध भी उभरकर सामने आए। इन अंतर्विरोधों को अंग्रेजी साम्राज्यवाद ने भारतीय समाज में विभाजन पैदा करने के लिए इस्तेमाल किया। इसका परिणाम धर्म के आधार पर देश के विभाजन में निकला। आजाद भारत एक धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक गणराज्य बना।

इस प्रकार नवजागरण और स्वाधीनता के संघर्ष के इस संक्षिप्त परिचय से आपको आधुनिक हिंदी साहित्य की पृष्ठभूमि को समझने में मदद मिलेगी।

1.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

विपिन चन्द्र : **भारत का स्वतंत्रता संघर्ष,** हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, (प्रकाशन 1994)

अयोध्या सिंह : **भारत का मुक्ति-संग्राम,** रेखा प्रकाशन, कलकत्ता, (प्रकाशन अक्तूबर, 1993)

रामचन्द्र शुक्ल : **हिंदी साहित्य का इतिहास,** नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी

हजारीप्रसाद द्विवेदी : **हिंदी साहित्य : उद्‌भव और विकास,** राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

रामविलास शर्मा : **महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण,** राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. (ग)
2. (ख)
3. वह ऐसे लोगों का एक वर्ग तैयार करना चाहता था जो अंग्रेजों और उन लाखों भारतीयों के बीच, जिन पर अंग्रेज शासन करते हैं, दुभाषिए का काम कर सके तथा

जिनका रक्त और रंग भारतीय हो, किंतु जो रुचि, विचारों, नैतिकता और बुद्धि की दृष्टि से अंग्रेज हों।

4. भारतीय मध्यवर्ग ने सबसे पहले यही सीखा कि वे एक राष्ट्र भारत के नागरिक हैं और हम सभी के हित एक से हैं।

5. क 4

   ख 3

   ग 2

   घ 1

6. सती प्रथा पर रोक, विधवा विवाह की अनुमति, बाल विवाह रोकने के लिए विवाह की आयु का निर्धारण और स्त्री शिक्षा के लिए स्कूलों की स्थापना।

7. ग

8. घ

9. अंग्रेजों से अधिक अधिकारों की माँग करने के लिए।

10. नरमदल के नेता यह मानते थे कि अंग्रेजों को चिट्ठी-पत्री के द्वारा अपनी माँगों के लिए मनवाया जा सकता है, किसी तरह के आंदोलन की आवश्यकता नहीं है। आजादी की कीमत देश को विभाजन और गांधी की हत्या के रूप में चुकानी पड़ी।

11. देखें 1.6

12. देखें 1.4

13. देखें 1.5

14. देखें 1.6

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 2 आधुनिक हिंदी साहित्य का आरंभ और भारतेंदु युग

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 गद्य का विकास

- 2.2.1 खड़ी बोली का गद्य
- 2.2.2 अंग्रेजों की शिक्षा नीति

2.3 प्रेस का महत्त्व

2.4 गद्य के निर्माण में ईसाई मिशनरियों की भूमिका

2.5 हिंदी-उर्दू विवाद और हिंदी भाषा का स्वरूप

2.6 भारतेंदु युग

2.7 प्रमुख रचनाकार

- 2.7.1 भारतेंदु हरिश्चन्द्र
- 2.7.2 प्रतापनारायण मिश्र
- 2.7.3 बालकृष्ण भट्ट
- 2.7.4 बालमुकुन्द गुप्त
- 2.7.5 श्रीधर पाठक

2.8 भारतेंदु युगीन कविता

2.9 मुख्य प्रवृत्तियाँ

- 2.9.1 राष्ट्र प्रेम
- 2.9.2 जिंदादिली
- 2.9.3 सामाजिक चेतना
- 2.9.4 भक्ति भावना
- 2.9.5 रीतिकालीन श्रृंगारिकता
- 2.9.6 अनुवाद
- 2.9.7 काव्य रूप

2.10 भारतेंदु युगीन गद्य

2.11 सारांश

2.12 उपयोगी पुस्तकें

2.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

2.0 उद्देश्य

यह इकाई कई मायनों में भिन्न है। इसकी प्रमुख भिन्नता यह है कि हिंदी साहित्य के इतिहास के अंतर्गत जहाँ अब तक आप हिंदी काव्य का ही अध्ययन कर रहे थे, वहाँ इस इकाई के द्वारा हिंदी गद्य का अध्ययन प्रारंभ करेंगे। इसके साथ–साथ आधुनिक काल के भारतेंदु युग के हिंदी साहित्य की जानकारी भी आप प्राप्त करेंगे।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- गद्य और पद्य के अंतर को स्पष्ट कर पाएँगे;
- आधुनिक हिंदी साहित्य की पृष्ठभूमि का विश्लेषण कर सकेंगे;
- बता सकेंगे कि किस प्रकार गद्य का लेखन प्रारंभ हुआ तथा आधुनिक हिंदी साहित्य के विकास क्या कारण थे;
- आधुनिक हिंदी साहित्य के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे;
- इस बात की व्याख्या कर सकेंगे कि किस प्रकार भारतेंदु जैसे व्यक्तित्व के आगमन से हिंदी साहित्य को नई दिशा मिली;
- भारतेंदु युग के साहित्य की मुख्य प्रवृत्तियों का विश्लेषण कर सकेंगे; और
- भारतेंदु युग के साहित्य का महत्व स्पष्ट कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में आप आधुनिक साहित्य के आरंभ और भारतेंदु युग के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। इस क्रम में यदि हम हिंदी साहित्य के इतिहास के प्रवाह को देखते हैं, तो हमें आधुनिक काल में कुछ एकदम नई बातें देखने को मिलती हैं।

पहली बात तो यह है कि आधुनिक साहित्य मुख्यतः गद्य साहित्य है। मध्यकाल तक का लगभग सारा हिंदी साहित्य पद्य साहित्य है। गद्य के गिने-चुने ग्रंथ मिलें तो मिल जाएँ, परन्तु तब तक का संपूर्ण सर्जनात्मक वैभव पद्य में ही मिलता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसीलिए आधुनिक काल को गद्य काल कहा है, हालाँकि आधुनिक काल में भी कवियों और कविताओं की संख्या कम नहीं है।

हिंदी के संदर्भ में दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आधुनिक साहित्य खड़ी बोली में लिखा गया साहित्य है। मध्यकाल में मुख्यतः ब्रजभाषा, अवधी, राजस्थानी, मैथिली का साहित्य मिलता है। खड़ी बोली तब तक साहित्य का माध्यम नहीं बनी थी। आधुनिक साहित्य का विकास खड़ी बोली के विकास के साथ जुड़ा हुआ है। इस बीच जिन लोगों ने ब्रजभाषा में साहित्य लिखा, उन्हें उतना विचारणीय नहीं माना गया। हालाँकि भारतेंदु युग में काव्य भाषा के रूप में ब्रज भाषा का महत्व बना हुआ था।

तीसरी बात यह महत्त्वपूर्ण है कि यह काल भारत के इतिहास के काल विभाजन से जुड़ा हुआ है। इसका आरंभ भारत में अंग्रेजी राज की स्थापना और विरोध से माना गया है। अंग्रेजों के विरोध को पुनर्जागरण, पुनरुत्थान, हिंदी नवजागरण, नवजागरण आदि कहकर पुकारा गया। पिछली इकाई में आप नवजागरण के संबंध में विस्तार से पढ़ चुके हैं। इस दृष्टि से आधुनिक साहित्य नवजागरण का साहित्य है। नवजागरण के मूल में राष्ट्रीयता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

अतः कुछ लोग इसे राष्ट्रीय जागरण भी कहते हैं। इस राष्ट्रीय जागरण के विकास के साथ-साथ हिंदी का और समग्रतः संपूर्ण आधुनिक भारतीय साहित्य का आरंभ और विकास हुआ।

चौथी बात उल्लेखनीय है कि आधुनिक साहित्य का संबंध आधुनिक जीवन दृष्टि से है और यह दृष्टि मध्ययुगीन जीवन दृष्टि से न केवल अलग है, वरन् विपरीत है। विद्वानों ने मध्ययुगीनता और आधुनिकता के अनेक भेदक लक्षण बताए हैं, जिन्हें आपको अलग से जानना और समझना चाहिए। यहाँ हम इनके मूलभूत अंतर को समझने का प्रयास करते हैं। आधुनिकता सप्रश्न दृष्टि है, जबकि मध्ययुगीनता आप्त वचनों पर आधारित जीवन दृष्टि है। सदा सच बोलो! माता-पिता का कहना मानो! गुरुजनों का आदर करो! झूठ मत बोलो आदि, ये आप्त वचन हैं, जो स्वयं प्रमाण हैं। इन्हें प्रमाणित करने की जरूरत नहीं। इन वचनों, मान्यताओं और निष्कर्षों की परिधि के भीतर लेखक रचना कर सकता है। जब आधुनिक दृष्टि आई तो इन पर प्रश्न उठे। सच क्यों बोलें? झूठ क्यों न बोलें? माता-पिता का कहना मानने से हमारा व्यक्तित्व कैसे विकसित होगा? इस तरह के कई प्रश्न उठने लगे। यही प्रश्नाकुलता साहित्य को आधुनिक बनाती है। जिन लेखकों में यह प्रश्नाकुलता नहीं है, उन्हें आधुनिक नहीं माना गया। इस तरह आपने निम्नलिखित बिंदुओं को जाना और समझा:-

- आधुनिक साहित्य मुख्यतः गद्य साहित्य है।
- आधुनिक साहित्य खड़ी बोली का साहित्य है।
- आधुनिक साहित्य का संबंध भारत में अंग्रेजी राज की स्थापना और उसके विरोध से जुड़ा हुआ है।
- आधुनिक साहित्य आधुनिक जीवन दृष्टि से सृजित हुआ है।

अब हम विस्तार से इन बातों के संदर्भ में हिंदी के आधुनिक साहित्य के बारे में जानेंगे।

2.2 गद्य का विकास

आप जान ही चुके हैं कि आधुनिक साहित्य का अर्थ मुख्यतः गद्य साहित्य और गद्य साहित्य का अर्थ खड़ी बोली का गद्य माना जाता है, तथापि विभिन्न खोजों और अनुसंधान के द्वारा यह तय हो चुका है कि खड़ी बोली के प्रचार-प्रसार से पहले ब्रजभाषा में गद्य की रचनाएँ मिलती हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार हिंदी पुस्तकों की खोज के दौरान हठयोग, ब्रह्मज्ञान आदि से संबंधित कई गोरखपंथी ग्रंथ ब्रजभाषा में मिले हैं जिनका निर्माण काल संवत् 1407 के आसपास है। इनकी ब्रजभाषा का नमूना देखिए:

'श्री गुरु परमानंद तिनको दंडवत है। हैं कैसे परमानंद, आनंदस्वरूप हैं सरीर जिन्हि को, जिन्हि के नित्य गाय तें शरीर चेतन्नि अरु आनंदमय होतु है। मैं जू हौं जोरिष सो मछंदर नाथ को दंडवत करता हैं।'

उपर्युक्त उदाहरण से पता चलता है कि यह गद्य अपरिमार्जित है। इसके बाद भी गद्य की कई छिटपुट रचनाएँ ब्रजभाषा में मिलती हैं। ब्रजभाषा गद्य की दो चर्चित रचनाएँ 17 वीं सदी के उत्तरार्द्ध में लिखी गई थीं। इनके नाम हैं - 'चौरासी वैष्णवों की वार्त्ता' और 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता'। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार वल्लभ सम्प्रदाय में ये रचनाएँ बहुत चर्चित रही हैं। इनमें से प्रथम, आचार्य श्री बल्लभाचार्य जी के पौत्र और गोसांई विठ्टलनाथजी के पुत्र गोसांई गोकुलनाथ जी की लिखी कही जाती हैं, पर

गोकुलनाथजी के किसी शिष्य की लिखी जान पड़ती है, क्योंकि इसमें गोकुलनाथजी का कई जगह बड़े भक्तिभाव से उल्लेख है। इसमें वैष्णव भक्तों और आचार्यजी की महिमा प्रकट करने वाली कथाएँ लिखी गई हैं। इसका रचनाकाल विक्रम की 17 वीं शताब्दी का उतरार्द्ध माना जा सकता है। 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता' तो और भी पीछे औरंगजेब के समय के लगभग की लिखी प्रतीत होती है। इन वार्ताओं की कथाएँ बोलचाल की ब्रजभाषा में लिखी गई हैं।

इनकी भाषा का नमूना देखने के लिए यह उद्धरण पठनीय है-

'सो श्री नंदगाम में रहतो सो खंडन ब्राह्मण शास्त्र पढ्यो ह्तो। सो जितने पृथ्वी पर मत हैं सबको खंडन करतो; ऐसो बाको नेम हतो। याही तें सब लोगन ने वाको नाम खंडन पार्‌यो हतो। सो एक दिन श्री महाप्रभुजी के सेवक वैष्णवन की मंडली में आयो। सो खंडन करन लागो।'

इसी तरह शुक्लजी ने संवत् 1660 के आसपास रचित नाभादासजी के 'अष्टयाम' नामक ग्रंथ का भी उल्लेख किया है। इनके अलावा परवर्ती काल में कुछ टीका ग्रंथ भी मिलते हैं। इनमें हरिचरनदास रचित 'बिहारी सतसई की टीका' (1777 ई.) जानकी प्रसाद की 'रामचन्द्रिका की टीका' (1815 ई.), बिहारी सतसई की 'रत्नचन्द्रिका टीका' (1839 ई.) आदि उल्लेखनीय हैं। इस तरह की छिटपुट कृतियों के अलावा ब्रजभाषा गद्य का विकास नहीं हुआ और ब्रजभाषा सिर्फ कविता की भाषा ही बनी रही। इस स्थिति पर टिप्पणी करते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मानना है कि ब्रजभाषा में गद्य का विकास न होना एक तरह से अच्छा हुआ। 'गद्य का भी विकास यदि होता आता तो विक्रम की इस शताब्दी के आरंभ में भाषा संबंधिनी बड़ी विषम समस्या उपस्थित होती। जिस धड़ाके के साथ गद्य के लिए खड़ी बोली ले ली गई उस धड़ाके के साथ न ली जा सकती। कुछ समय सोच-विचार और वाद-विवाद में जाता और कुछ समय तक दो प्रकार के गद्य की धाराएँ साथ-साथ दौड़ लगातीं। अतः भगवान का यह भी एक अनुग्रह समझना चाहिए कि यह भाषा-विप्लव नहीं संघटित हुआ और खड़ी बोली, जो कभी अलग और कभी ब्रजभाषा की गोद में दिखाई पड़ जाती थी धीरे-धीरे व्यवहार की शिष्ट भाषा होकर गद्य के नए मैदान में दौड़ पड़ी।'

2.2.1 खड़ी बोली का गद्य

अब आपके मन में यह प्रश्न उठता होगा कि यह खड़ी बोली कहाँ से आई? जब ब्रजभाषा मौजूद थी और आज भी है तो एकाएक खड़ी बोली कैसे इतनी सशक्त हो गई? यहाँ इस प्रश्न पर थोड़ी सी प्रासंगिक चर्चा आवश्यक है। इस संदर्भ में दो परस्पर विरोधी मत मिलते हैं।

विचारकों का एक वर्ग मानता है कि खड़ी बोली की उत्पत्ति फारसी से हुई और वह दरअसल उर्दू है। फारसी मुगल दरबार की राजभाषा थी। चूँकि भारतीय जनता फारसी से परिचित नहीं थी, अतः फारसी और देशी भाषाओं के मिश्रण से खड़ी बोली का विकास हुआ। इस भाषा को पढ़े लिखे लोग फारसी लिपि में लिखने लगे। इसी को रेख्ता, हिन्दवी आदि कहा जाने लगा। इसका सबसे समर्थ आरंभिक प्रयोग खुसरो की पहेलियों में मिलता है-

> एक थाल मोती से भरा, सबके ऊपर औंधा धरा।
> चारो ओर वह थाली फिरे, मोती उससे एक न गिरे।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इस मत का खंडन किया। उनका तर्क था कि किसी भाषा में लिखित साहित्य का न होना इस बात का प्रमाण नहीं है कि उस भाषा का अस्तित्व ही

नहीं था। 'उर्दू का रूप प्राप्त होने के पहले भी खड़ी बोली अपने देशी रूप में वर्तमान थी और अब भी बनी हुई है।' आचार्य शुक्ल ने अपभ्रंश काव्य में खड़ी बोली का प्राचीन रूप दिखाया हैः-

भल्ला हुआ जु मारिया, बहिणि! महारा कंतु।
लज्जेजं तु वयंसिअहु जई भग्गा घरू एंतु।

इसके बाद कबीर की 'सधुक्कड़ी' भाषा को भी शुक्लजी ने खड़ी बोली का ही एक रूप माना हैः-

कबीर मन निर्मल भया जैसा गंगा नीर।
× × ×
कबीर कहता जात हूँ, सुनता है सब कोइ।
राम कहे भला होयगा, नहीं तर भल न होइ।।

इसी तरह अकबर के समय के गंग कवि की 'चंद-छंद बरनन की महिमा' नामक गद्य ग्रंथ का उद्धरण देकर सिद्ध किया है कि 'यह भाषा उर्दू नहीं कही जा सकती; यह हिंदी खड़ी बोली है। यद्यपि पहले से साहित्य-भाषा के रूप में स्वीकृत न होने के कारण इसमें अधिक रचना नहीं पाई जाती, पर यह बात नहीं है कि इसमें ग्रन्थ लिखे ही नहीं जाते थे।'

इसी तरह एक मत यह भी प्रचलन में रहा है कि खड़ी बोली हिंदी में गद्य रचना अंग्रेजों के कारण और प्रभाव से सम्पन्न हुई। इसके लिए कुछ लोग फोर्ट विलियम कॉलेज और जॉन गिलक्राइस्ट का नाम लेते हैं। आचार्य शुक्ल उनसे भी सहमत नहीं। वे रामप्रसाद 'निरंजनी' की पुस्तक 'भाषा योगवासिष्ठ'(सन् 1741) को खड़ी बोली हिंदी की प्रथम प्रौढ़ गद्य कृति मानते हैं।

इस कृति के गद्य का एक नमूना पठनीय हैः-

'मोक्ष का कारण कर्म है कि ज्ञान है अथवा दोनों हैं, समझाय के कहो। इतना सुन अगस्त मुनि बोले कि हे ब्राह्मण्य! केवल कर्म से मोक्ष नहीं होता और न केवल ज्ञान से मोक्ष होता है, मोक्ष दोनों से प्राप्त होता है। कर्म से अंतःकरण शुद्ध होता है, मोक्ष नहीं होता और अंतःकरण की शुद्धि बिना केवल ज्ञान से मुक्ति नहीं होती।'

शुक्लजी ने दो एक और गद्य पुस्तकों का उदाहरण देते हुए अपना मत व्यक्त किया कि 'अंग्रेजों की ओर से पुस्तकें लिखाने की व्यवस्था हुई उसके दो एक वर्ष पहले ही मुंशी सदासुख की ज्ञानोपदेश वाली पुस्तक और इंशा अल्लाखाँ का 'रानी केतकी की कहाना' लिखी जा चुकी थी। अतः यह कहना कि अंग्रेजों की प्रेरणा से ही हिंदी खड़ी बोली गद्य का प्रादुर्भाव हुआ, ठीक नहीं है।' फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि हिंदी गद्य के निर्माण के आरंभिक दौर में ईस्ट इंडिया कंपनी की महत्वपूर्ण भूमिका थी जिसके बारे में हम आपको आगे बताएँगे।

अब तक पढ़े गए अंश का निष्कर्ष इस प्रकार हैः-

1. हिंदी में गद्य लेखन की आरंभिक रचनाएँ ब्रज भाषा में मिलती हैं। हालाँकि ब्रजभाषा मुख्यतः काव्य भाषा के रूप में प्रचलित रही है।

2. खड़ी बोली भाषा के रूप में समाज में मौजूद रही है, परन्तु उसमें साहित्य सर्जन आधुनिक काल में आरंभ हुआ।

3. खड़ी बोली का उदय फारसी से नहीं हुआ। उर्दू के अस्तित्व में आने से पूर्व हिंदी खड़ी बोली का अस्तित्व था।

4. खड़ी बोली में गद्य लेखन की शुरूआत का श्रेय अंग्रेजों को नहीं दिया जा सकता। उनसे पहले हिंदी खड़ी बोली में गद्य लेखन आरंभ हो चुका था।

गद्य लेखन की इस परंपरा को समझने के बाद हम उन परिस्थितियों की चर्चा करते हैं, जिनसे हिंदी में आधुनिक साहित्य का लेखन संभव हो सका। यूरोप से भारत आने-जाने का थल मार्ग से रास्ता बन्द हो गया, तब यूरोपीय देशों ने भारत पहुँचने के लिए नए समुद्री मार्ग को तलाशने का अभियान प्रारंभ किया। इस खोज में भटकते-भटकते स्पेन का नाविक कोलम्बस अमेरिका पहुँच गया और इस तरह अमेरिकी उपमहाद्वीप की खोज हुई।

कोलम्बस के भारत नहीं पहुँच सकने के बाद भी यह अभियान जारी रहा, जिसके फलस्वरूप पुर्तगाली नाविक वास्को दि गामा 1498 को भारत पहुँचा और तबसे पुर्तगाल डच, फ्रांस और अंग्रेजों ने भारत में व्यापार करने के प्रयास प्रारंभ किए।

2.2.2 अंग्रेजों की शिक्षा नीति

यद्यपि क्लाइव ने भारत में अंग्रेजी राज की नींव डाल दी थी। लेकिन भारत में प्रशासन का ढाँचा वारेन हेस्टिंग्स ने तैयार किया। वारेन हेस्टिंग्स ने महसूस किया कि भारत में अंग्रेजी राज्य बहुत अस्थिर है क्योंकि कंपनी के कर्मचारी देशी भाषाओं और यहाँ के साहित्य और संस्कृति से परिचित नहीं है। हेस्टिंग्स ने कहा कि यदि भारत पर हमें दीर्घकालीन शासन करना है तो भारतीयों का ह्दय जीतना पड़ेगा; और इसके लिए जरूरी है कि सरकारी कर्मचारी यहाँ की भाषा, साहित्य और संस्कृति से परिचित हों। इसके लिए हेस्टिंग्स ने भारत आने वाले कर्मचारियों के लिए कम से कम एक भारतीय भाषा का ज्ञान आवश्यक कर दिया। इसके लिए उसने सन् 1773 में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में फारसी विभाग खोलने का प्रस्ताव रखा और कहा कि भारत आने वाले प्रत्येक अंग्रेज को फारसी और यदि सम्भव हो तो हिंदुस्तानी (उर्दू) भाषा आनी चाहिए ताकि वे कम्पनी के लिए हिन्दू और मुस्लिम कानूनों का अनुवाद कर सकें तथा कम्पनी के प्रस्तावों और नियमों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद कर सकें।

इस तरह अंग्रेजों द्वारा भारतीय भाषाओं को आधुनिक ढंग से सीखने के प्रयास हुए। अंग्रेजों ने सबसे पहले बंगला सीखी और 1788 ई. में नाथेनियल हाल्हेड ने बंगला व्याकरण ग्रंथ 'ग्रामर ऑव बंगाली लैंग्वेज' लिखा। इसी क्रम में जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन ने आगे चलकर हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास लिखने का गौरव प्राप्त किया। भाषा सीखने और सिखाने के क्रम में छापाखाना आया। भारतीय भाषाओं के टाइप सेट तैयार किए गए। 1779 में चार्ल्स विल्किंस ने बंगला सेट तैयार किया तथा यहीं से हाल्हेड की पुस्तक प्रकाशित हुई। इसी प्रेस से भारत का पहला अंग्रेजी समाचार पत्र 'हिक्की गजट' प्रकाशित हुआ।

इन्हीं सरकारी कर्मचारियों ने आपसी बौद्धिक संवाद को नियमित करने के लिए सन् 1784 में प्रसिद्ध 'एशियाटिक सोसायटी ऑव बंगाल' की स्थापना की। विलियम जोन्स इसके प्रथम अध्यक्ष थे। आधुनिक भारतीय साहित्य के निर्माण और विकास में इस संस्था की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण थी।

इसी नीति के अन्तर्गत 10 जुलाई 1800 ई. को फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना की घोषणा की गई। इस कालेज की स्थापना के दो मुख्य उद्देश्य थेः-

1. भारतीयों और अंग्रेजों के बीच अलगाव को समाप्त किया जाए और
2. अंग्रेज कर्मचारियों को भारतीय भाषाओं, साहित्य और संस्कृति की शिक्षा दी जाए ताकि भारत में अंग्रेजी राज्य की जड़ें मजबूत हो सकें।

24 नवम्बर 1800 को कॉलेज की स्थापना हुई। इसमें अरबी, फारसी, संस्कृत और छः अन्य भारतीय भाषाएँ, मुस्लिम और हिंदू कानून, अंग्रेजी कानून, कम्पनी के कानून, राजनीतिक अर्थशास्त्र, विश्वभूगोल, गणित, यूरोप की आधुनिक भाषाओं के साथ लेटिन, ग्रीक, यूरोप का प्राचीन और आधुनिक इतिहास, भारत का इतिहास, विज्ञान, प्राकृतिक इतिहास, वनस्पति विज्ञान, रसायन शास्त्र आदि विषयों के अध्ययन की सुविधाएँ उपलब्ध थीं। इस कॉलेज के अध्यापन कार्य में एशियाटिक सोसाइटी के सदस्यों और अन्य प्राच्य विद्याविदों ने भी सहयोग दिया। हिंदुस्तानी भाषाओं के अध्यापन का कार्य गिलक्राइस्ट और संस्कृत के अध्यापन का कार्य क्रोल ब्रुक्स को सौंपा गया। इसके अलावा कई बंगाली पंडितों और मुंशियों को भी कालेज में नौकर रख लिया गया, जो भाषा के सही ज्ञान और अनुवाद के लिए इन अंग्रेजों की मदद किया करते थे।

फोर्ट विलियम कॉलेज के बारे में इतने विस्तार से आपको इसलिए जानकारी दी जा रही है, क्योंकि आधुनिक हिंदी साहित्य के निर्माण में और विशेषतः हिंदी गद्य के स्वरूप निर्माण में इस कॉलेज की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। इस कॉलेज के योगदान को हिंदी साहित्य के सभी इतिहासकारों ने स्वीकार किया है। जान गिलक्राइस्ट ने देशी भाषा की गद्य पुस्तकें तैयार करने के लिए अलग से लेखकों को अनुबंधित किया। इस तरह हिंदी गद्य के जिन चार आरंभिक लेखकों का जिक्र किया जाता है, उनमें से दो लोग गद्य की पुस्तकें लिखने के लिए कॉलेज से वेतन पाते थे। इनमें से एक लल्लूलाल और दूसरे सदल मिश्र थे। इनके अलावा जिन दो अन्य लेखकों का जिक्र इनके साथ आता है वे हैं- मुंशी सदासुखलाल और इंशाअल्ला खाँ। हिंदी खड़ी बोली गद्य के इतिहास में इनका महत्त्व असंदिग्ध है।

मुंशी सदासुखलाल की रचना का नाम 'सुख सागर, इंशा अल्लाखाँ की कहानी का शीर्षक' 'उदयभान चरित या रानी केतकी की कहानी' है। लल्लूलाल ने 'प्रेमसागर' और सदल मिश्र ने 'नासिकेतोपाख्यान' की रचना की।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इन चारों लेखकों की भाषा का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि 'चार लेखकों में से आधुनिक हिंदी का पूरा पूरा आभास मुंशी सदासुख और सदल मिश्र की भाषा में ही ठहरता है। व्यवहारोपयोगी इन्हीं की भाषा ठहरती है।' इनमें से सदल मिश्र की भाषा का नमूना आपकी जानकारी के लिए यहाँ दिया जा रहा है-

'इस प्रकार से नासिकेत मुनि यम की पुरी सहित नरक का वर्णन कर फिर जौन जौन कर्म किए से जो भोग होता है सो सब ऋषियों को सुनाने लगे कि गौ, ब्राह्मण, मातापिता, मित्र, बालक, स्त्री, स्वामी, वृद्ध, गुरु इनका जो वध करते हैं वो झूठी साक्षी भरते, झूठ ही कर्म में दिन रात लगे रहते हैं। अपनी भार्य्या को त्याग दूसरे की स्त्री को ब्याहते, औरों की पीड़ा देख प्रसन्न होते हैं और जो अपने धर्म से हीन पाप ही में गड़े रहते हैं वो माता पिता की हित बात को नहीं सुनते। सबसे बैर करते हैं। ऐसे जो पापी जन हैं सो महा डरावने दक्षिण द्वार से जा नरकों में पड़ते हैं।'

बोध प्रश्न

1. आधुनिक काल की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।

....

....

....

....

2. खड़ी बोली कैसे अस्तित्व में आई?

....

....

....

3. हिंदी के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज का महत्व समझाइए।

....

....

....

2.3 प्रेस का महत्त्व

अंग्रेजों की शिक्षा नीति पर चर्चा करने के बीच में प्रेस के महत्व के बारे में संक्षेप में बात कर लेते हैं। प्रेस आधुनिक मशीनी युग की देन है और भारत में इसे अंग्रेज लेकर आए। वे न केवल प्रेस लेकर आए, वरन् उन्होंने देशी भाषाओं के टाइप के अक्षर भी तैयार करवाए। उसमें पुस्तकें छपवाने की व्यवस्था की। आपको विदित ही है कि भारतीय भाषाओं में सबसे पहले बंगला का टाइप सेट 1779 ई. में तैयार हुआ।

आचार्य हजारी प्रासाद द्विवेदी ने प्रेस के साहित्यिक महत्व को प्रकट करते हुए लिखा है— 'वस्तुतः साहित्य में आधुनिकता का वाहक प्रेस है और उनके प्रचार के सहायक हैं : यातायात के समुन्नत साधन। पुराने साहित्य से नए साहित्य का प्रधान अंतर यह है कि पुराने साहित्यकार की पुस्तकें प्रचारित होने का अवसर कम पाती थीं। राजाओं की कृपा, विद्वानों की गुणग्राहिता, विद्यार्थियों के अध्ययन में उपयोगिता इत्यादि अनेक बातें उनके प्रचार की सफलता का निर्धारण करती थीं। प्रेस हो जाने के बाद पुस्तकों के प्रचारित होने का कार्य सहज हो गया, और फिर प्रेस के पहले गद्य की बहुत उपयोगिता नहीं थी। प्रेस हो जाने के बाद उसकी उपयोगिता बढ़ गई और विविध विषयों की जानकारी देने वाली पुस्तकें प्रकाशित होने लगीं। वस्तुतः प्रेस ने साहित्य को प्रजातांत्रिक रूप दिया। समाचारपत्र, उपन्यास, आधुनिक ढंग के निबंध और कहानियाँ, सब प्रेस का प्रचार होने के बाद ही लिखी जाने लगीं। अब साहित्य के केन्द्र में कोई राजा या रईस नहीं रहा, बल्कि अपने घरों में बैठी हुई असंख्य अज्ञात जनता आ गई।' इस प्रकार प्रेस ने साहित्य के प्रचार में, उसकी अभिवृद्धि में, और उसकी नई-नई शाखाओं के उत्पन्न करने में ही सहायता ही नहीं दी, बल्कि उसकी दृष्टि से समूल परिवर्तन में भी योग दिया।

2.4 गद्य के निर्माण में ईसाई मिशनरियों की भूमिका

अंग्रेजी राज्य की स्थापना के साथ ही भारत में ईसाई धर्म का प्रचार करने हेतु मिशनरी आ गए थे। उन्होंने आधुनिक भारतीय भाषाओं का विधिवत अध्ययन किया, तथा उसमें धार्मिक ग्रंथों की रचना की। 1799 में कलकत्ता के निकट श्रीरामपुर में विलियम कैरे, मार्शमेन और वार्ड ने डेनिश मिशन की स्थापना की। इन्होंने 1811ई. में बाइबिल का हिंदी में अनुवाद किया। भारतीय जनता को समझने के लिए अनेक संस्कृत ग्रंथों का अंग्रेजी में अनुवाद किया। सन् 1832 तक श्रीरामपुर के मिशनरियों ने लगभग 40 भाषाओं में ईसाई धर्म की पुस्तकों के अनुवाद प्रकाशित किए। कहने की आवश्यकता नहीं है कि इससे हिंदी गद्य के विकास में अभूतपूर्व सहायता मिली।

भारत में शिक्षा के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से मिशनरियों ने बहुत-सी टेक्स्ट-बुक सोसाइटियाँ बनाईं, जहाँ से गद्य में पाठ्य पुस्तकें प्रकाशित हो सकीं। इनमें कलकत्ता स्कूल बुक सोसाइटी (1817 ई.) मद्रास स्कूल बुक सोसाइटी (1833 ई.), नार्दन इंडियन क्रिश्चियन बुक सोसाइटी आगरा-बनारस (1848 ई.) प्रमुख हैं।

इस तरह आधुनिक भारतीय साहित्य और संस्कृति विशेषतः हिंदी साहित्य के निर्माण में इन तीन संस्थाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान था, जिनमें प्राच्यविद्याविद अंग्रेजों का वर्चस्व था :

1. एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल
2. फोर्ट विलियम कालेज
3. श्रीरामपुर मिशन

इन प्राच्यविद्याविद अंग्रेजों ने दो महत्त्वपूर्ण मान्यताएँ रखीं; जिन पर लगभग 1936 तक का हिंदी साहित्य वैचारिक रूप से निर्भर है :

1. 1786 ई. में विलियम जोन्स ने वैदिक युग के रूप में स्वर्णिम अतीत की परिकल्पना प्रस्तुत की।
2. क्रोलब्रुक्स ने कहा कि संसार में सभ्यता की उत्पत्ति एशिया अर्थात् भारत से होती है।

ये प्राच्य विद्याविद अंग्रेज प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रशंसक थे। उन्होंने अनेक प्राचीन ग्रंथों, ऐतिहासिक महत्त्व के स्थानों, मूर्तियों, चित्रों, पाण्डुलिपियों की खोज और रक्षा की, जिससे भारतीय इतिहास लेखन की संभावना विकसित हुई।

इस पर यहाँ इतनी ही चर्चा करते हुए कहना चाहेंगे कि 1825 ई. के आसपास अंग्रेजों की शिक्षा और संस्कृति संबंधी नीति में विवाद होने लगता है। इस बीच यूरोप में उग्र राष्ट्रवाद का उदय हुआ। वे मानते थे कि अंग्रेज जाति श्रेष्ठ है, उसकी सभ्यता, संस्कृति और साहित्य दुनिया में सर्वश्रेष्ठ है। अंग्रेजी राज्य में कभी सूर्यास्त नहीं होता। इसी तरह यह भी प्रचारित किया गया कि भारतीय जड़ और मूर्ख है, उनके साहित्य और संस्कृति में अन्धविश्वास भरे पड़े हैं। उनका साहित्य विशाल अंग्रेजी साहित्य की एक अलमारी में समाने लायक है। इस दृष्टि का समर्थक मैकाले था। मैकाले और प्राच्यविद्याविदों के बीच लंबा संघर्ष चला। जिसमें मैकाले की विजय हुई और भारतीयों को अंग्रेजी साहित्य और ज्ञान-विज्ञान पढ़ाने का निर्णय लिया गया। 1835 ई. में इस नई शिक्षा नीति के फलस्वरूप 1854 ई. में प्रसिद्ध फोर्ट विलियम कॉलेज बंद कर दिया गया।

प्राच्य विद्याविद मानते थे कि भारतीयों को उनके साहित्य और संस्कृति के विपरीत कुछ कहा सुना जाएगा,तो अंग्रेजी राज खतरे में पड़ जाएगा। वुड ने इसका जवाब देते हुए कहा कि 'कुछ भी हो, मैं यह विश्वास नहीं करता कि भारतीयों को शिक्षा देकर हम साम्राज्य को खतरे में डालेंगे। इसके विपरीत मैं विश्वास करता हूँ कि यदि अधिकांश भारतीयों को शिक्षा दी जाय और उन्हें रोशनी पहुँचायी जाए तो वे सामान्य विचारों द्वारा और अधिक बँध जाएँगे, उसका नतीजा यह होगा कि भारतीय साम्राज्य पर हमारी पकड़ और मजबूत होगी न कि ढीली।'

जो भी हो, दोनों तरह के अंग्रेज भारत को अधिकाधिक गुलाम बनाए रखना चाहते थे, परन्तु इतिहास की गति के कारण दोनों के क्रियाकलापों से भारत में राष्ट्रीय जागरण फैला

और आधुनिक साहित्य के विकास के मार्ग प्रशस्त हुए। भारतीयों के अधिकाधिक शोषण के लिए कृषि संबंधी अनेक कर लगाए गए, साथ ही आवागमन के साधनों का भी विकास किया गया। रेलवे लाइनें बिछाई जाने लगी। इन सबसे अप्रत्यक्ष रूप से भारतीयता का भाव मूर्त रूप लेने लगा।

यदि इस दौर के भारतीय समाज को देखें, तो वह अंग्रेजों के प्रभाव का निष्क्रिय ग्रहण कर्त्ता नहीं था, बल्कि यहाँ भी समाज सुधार आन्दोलन प्रारंभ हो चुके थे। राजा राममोहन राय ने 1828 ई. में कलकत्ता में ब्रह्मसमाज की स्थापना की। इनके अलावा केशवचन्द्र सेन, महादेव गोविंद रानडे, स्वामी दयानंद सरस्वती, विवेकानंद आदि ने समाज सुधार और धार्मिक सुधार के जबर्दस्त आंदोलन चलाए। आर्यसमाज के आगमन के कारण सनातन धर्मावलम्बी भी पुनः संगठित हुए। दोनों में चल रही वैचारिक बहस से हिंदी समाज का मानसिक स्तर ऊपर उठने लगा। इनके शास्त्रार्थ से हिंदी गद्य विकसित हो रहा था। इन बिन्दुओं पर आप पिछली इकाई में विस्तार से पढ़ चुके हैं। समाज सुधार आन्दोलनों के इसी दौर में हिंदी पत्रकारिता का जन्म हुआ। 30 मई 1826 ई. को पंडित युगल किशोर शुक्ल का 'उदंत मार्तंड' नामक पत्र कलकत्ता से प्रकाशित हुआ। इसके बाद कलकत्ता से ही 'बंगदूत' नामक पत्र 8 मई 1829 ई. को प्रकाशित हुआ। इसमें चार भाषाओं की रचनाएँ छपती थीं- अंग्रेजी, बंगला, हिंदी और फारसी। हिंदी भाषी प्रदेश में 1844 ई. में राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने 'बनारस पत्रिका' को प्रकाशित किया। कहने का तात्पर्य यह है कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की पत्रकारिता से पहले हिंदी पत्रकारिता के छिटपुट प्रयास प्रारंभ हो चुके थे।

2.5 हिंदी-उर्दू विवाद और हिंदी भाषा का स्वरूप

जिस समय खड़ी बोली हिंदी का प्रचार-प्रसार हो रहा था, गद्य की पुस्तकें लिखी जा रही थी, अखबार निकल रहे थे, कविताओं में भी कुछ छिटपुट प्रयोग हो रहे थे, उस समय हिंदी के भावी स्वरूप को लेकर बहस भी हो रही थी, आंदोलन भी होने लगे थे। मुगलों के समय से भारत की राजभाषा फारसी थी। इससे आम जनता को कठिनाई हो रही थी। अंग्रेजों ने इस कठिनाई को ध्यान में रखते हुए सन् 1836 में अदालतों का कार्य देशी भाषा या हिंदी में किए जाने का सरकारी आदेश निकाला। इसका बहुत विरोध हुआ। फलतः यह आदेश वापिस ले लिया गया।

1700 ई. में वली दकनी जब दक्षिण भारत से दिल्ली आए वो उन्होंने यहाँ आकर एक भाषा रेख्ता का प्रचलन किया। रेख्ता का अर्थ होता है 'छितराया हुआ'। अर्थात् जिस देशी भाषा में अरबी-फारसी के शब्द छितराए हुए मिलते है वही भाषा 'रेख्ता' कही गई। वली की यह रेख्ता काफी लोकप्रिय साबित हुई क्योंकि इसे शासनतंत्र से जुड़े फारसी बोलने वाले मुसलमान भी समझ सकते थे और जन सामान्य भी देशी ढाँचा होने के कारण इसे समझ सकता था। पर धीरे-धीरे इस रेख्ता में अरबी-फारसी के शब्दों की संख्या बढ़ती चली गई और यह उस समय प्रचलित देशी भाषा रूप से अलग हटकर एक नई शैली के रूप में प्रसिद्धि पा गई। भाषा के इसी रूप को उर्दू कहा गया।

अब विवाद का मुद्दा था कि फारसी लिपि में लिखी जाने वाली अरबी-फारसी शब्दों से लदी हुई उर्दू को भारत की देशी भाषा माना जाए या नागरी लिपि में लिखी हुई संस्कृत की परंपरा में लिखी जाने वाली हिंदी को इस देश की भाषा माना जाए। इस विवाद के कारण 'नागरी' लिपि के प्रचार-प्रसार का आंदोलन चला और इसी कारण बनारस में नागरी प्रचारिणी सभा (1899 ई.) का गठन हुआ। आर्य समाज ने इस आन्दोलन को पुरजोर समर्थन दिया।

इधर उर्दू के समर्थन में भी सर सैयद अहमद खाँ के नेतृत्व में लोग संगठित होने लगे। इसी समय राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद (1823-95) आते हैं। उस समय हिंदी में पाठ्यपुस्तकों के निर्माण का कार्य बहुत जोर-शोर से चल रहा था। राजा शिव प्रसाद शिक्षा विभाग में इन्स्पेक्टर के पद पर नियुक्त हुए। उन्होंने हिंदी की पाठ्यपुस्तकें तैयार करवाने के साथ-साथ कई कहानियाँ भी लिखीं जैसे - राजा भोज का सपना, वीरसिंह का वृत्तांत, आलसियों का कोड़ा आदि। उन्होंने अरबी-फारसी शब्दों से युक्त हिंदी भाषा का प्रचलन करना चाहा। आगे चलकर इसी भाषा का प्रयोग प्रेमचंद ने किया। उर्दू को वे 'हमारे मुल्क की मुख्य भाषा' मानते थे। उर्दू का आग्रह उनकी दृष्टि में इसलिए भी था कि 'कचहरियों के सारे कागज-पत्र' इसी भाषा में तैयार होते थे, इसलिए उनकी भाषा धीरे-धीरे देवनागरी लिपि में लिखी हुई उर्दू बन गई। भाषा संबंधी अपनी मान्यताओं को उन्होंने इन शब्दों में व्यक्त किया हैः-

'हम लोगों को जहाँ तक बन पड़े चुनने में उन शब्दों को लेना चाहिए कि जो आम-फहम और खास-पसंद हों अर्थात् जिनको जियादा आदमी समझ सकते हैं और जो यहाँ के पढ़े लिखे आलिम फ़ाज़िल, पंडित, विद्वान् की बोलचाल में छोड़े नहीं गए हैं और जहाँ तक बन पड़े हम लोगों को हर्गिज़ गैर मुल्क के शब्द काम में न लाने चाहिए और न संस्कृत की टकसाल कायम करके नए नए ऊपरी शब्दों के सिक्के जारी करने चाहिए; जब तक कि हम लोगों को उसके जारी करने की जरूरत न साबित हो जाय अर्थात् यह कि उस अर्थ का कोई शब्द हमारी जबान में नहीं है या जो है अच्छा नहीं है, या कविताई की ज़रूरत या इल्मी जरूरत या कोई ख़ास ज़रूरत साबित हो जाय।'

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद की भाषा का विरोध हुआ। राजा लक्ष्मण सिंह ने सितारे हिंद की भाषा से भिन्न प्रकृति की भाषा में कालिदास की रचनाओं का अनुवाद किया। भाषा के संबंध में अपना मत व्यक्त करते हुए उन्होंने लिखा- 'हमारे मत में हिंदी और उर्दू दो बोली न्यारी न्यारी है। हिंदी इस देश के हिन्दू बोलते हैं और उर्दू यहाँ के मुसलमानों और फारसी पढ़े हुए हिंदुओं की बोलचाल है। हिंदी में संस्कृत के पद बहुत आते हैं, उर्दू में अरबी फारसी के। परन्तु कुछ अवश्य नहीं है कि अरबी फारसी के शब्दों के बिना हिंदी न बोली जाय और न हम उस भाषा को हिंदी कहते हैं जिसमें अरबी, फारसी के शब्द भरे हों।' राजा लक्ष्मणसिंह ने इसी तत्सम बहुल हिंदी में सन् 1862 ई. में 'अभिज्ञान शाकुन्तलम' का अनुवाद किया।

इस समय तक हिंदी में कई और गद्य लेखक भी आ गए थे, जिन्होंने इस दौर में हिंदी भाषा के स्वरूप को स्थिर करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। पंजाब में नवीनचन्द्र राय और श्रद्धाराम फुल्लौरी ने हिंदी के प्रचार-प्रसार हेतु महत्वपूर्ण कार्य किया। श्रद्धाराम फुल्लौरी ने सन् 1873 में 'भाग्यवती' नामक उपन्यास की रचना की। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लंदन निवासी फ्रेडरिक पिंकाट के योगदान की भी प्रशंसा की है। इनके अलावा मथुराप्रसाद मिश्र, काशीनाथ खत्री, ब्रजवासी दास, पं. वंशीधर आदि कई लेखकों ने हिंदी के स्वरूप निर्धारण और लेखन में योगदान किया। यहाँ इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि तब तक हिंदी में काव्यभाषा ब्रजभाषा ही थी। आधुनिक साहित्य के आरंभ का यह सारा प्रयास खड़ी बोली गद्य में ही होता रहा। निबंध, उपन्यास, कहानी, आलोचना, संस्मरण आदि विधाओं का प्रारंभ भी इस दौर में हो चुका था। इनके बारे में अगली इकाइयों में आप विस्तार से अध्ययन कर सकेंगे।

अब तक बताई गई बातों का निष्कर्ष इस प्रकार है :

1. भारत में अंग्रेजी राज की स्थापना का आधुनिक साहित्य के आरंभ से गहरा संबंध है।

2. अंग्रेजों का भारतीयों पर प्रभाव उनके विरोध और समर्थन दोनों रूपों में पड़ा।
3. प्राच्य विद्याविद अंग्रेजों और आधुनिकतावादी अंग्रेजों की बहस और कार्यों से भारतीय मनीषा प्रभावित हुई।
4. हिंदी गद्य के आरंभिक विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज की भूमिका महत्त्वपूर्ण थी। हालांकि फोर्ट विलियम कॉलेज से पहले ही हिंदी गद्य का उदय हो चुका था।
5. प्रेस और पत्रकारिता के उदय ने साहित्य को जनतांत्रिक स्वरूप दिया।
6. हिंदी गद्य के निर्माण में ईसाई मिशनरियों ने भी अनजाने में योगदान दिया।
7. हिंदी के स्वरूप निर्धारण में हिंदी-उर्दू के विवाद की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही।
8. नागरी लिपि के समर्थन में बौद्धिक वातावरण तैयार किया गया।
9. अब तक का आधुनिक साहित्य गद्य में ही लिखा गया। कविता की भाषा ब्रजभाषा ही बनी रही तथा उसके विषय भी परंपरागत ही रहे।

2.6 भारतेंदु युग

जब भी हम भारतेंदु युग के बारे में बात करते हैं, तो हमें कुछ बातें सबसे पहले जान लेनी चाहिए। भारतेंदु युग का समय मोटे तौर पर 1857 ई. से 1900 ई. तक माना जाता है अर्थात् प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद से बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक। 1900 ई. में 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन के साथ हिंदी में नए युग, द्विवेदी युग, का प्रारंभ माना जाता है। भारतेंदु का जन्म 1850 ई. में और मृत्यु 1885 ई में हुई। 35 वर्ष की अल्पायु में वे युग निर्माता बन गए। इसी कारण इस पूरे युग का नामकरण भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाम पर पड़ा। उनकी मृत्यु के बाद भी 2 वर्षों तक का समय भारतेंदु युग के भीतर ही माना जाता है। इन वर्षों तक यही चेतना सक्रिय रही। इन मोटी-मोटी बातों को ध्यान में रखने से हम इस युग को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं।

भारतेंदु हरिश्चंद्र आधुनिक 'हिंदी गद्य के प्रवर्तक' माने जाते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भारतेंदु के पूर्व के लेखकों से उनकी तुलना करते हुए लिखा है, 'मुंशी सदासुख की भाषा साधु होते हुए भी पंडिताऊपन लिए थी, लल्लूलाल का उर्दूपन शब्दों तक ही परिमित न था, वाक्यविन्यास तक में घुसा था। राजा लक्ष्मणसिंह की भाषा विशुद्ध और मधुर तो अवश्य थी, पर आगरे की बोलचाल का पुट उसमें कम न था। भाषा का निखरा हुआ शिष्ट, सामान्य रूप भारतेंदु की कला के साथ ही प्रकट हुआ।' इस तरह भारतेंदु ने खड़ी बोली हिंदी को एक स्वीकृत रूप दिया। संयोग से आज भी हम जिस हिंदी का प्रयोग कर रहे हैं, वह भारतेंदु द्वारा सँवारी-सुधारी हुई है।

भारतेंदु ने जिस नवीन चेतना का प्रचार-प्रसार किया था, जिस राष्ट्र प्रेम की नींव डाली थी, उसके मूल में अपनी भाषा से प्रेम भी था। वे देश प्रेम का आरंभ देश की भाषा से प्रेम में मानते थे। इस संदर्भ में उनकी कविता की ये पंक्तियाँ बहुत उद्धृत की जाती रही हैं :

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।।

'निजभाषा' के वैचारिक और भावात्मक समर्थन के साथ-साथ भारतेंदु ने अपनी नेतृत्वकारी क्षमता का उपयोग करते हुए नए साहित्य के सर्जन का प्रयास भी किया। आधुनिक हिंदी

साहित्य की लगभग सभी गद्य विधाओं का जन्म भारतेंदु युग में ही हो गया था, नाटक, निबंध, प्रहसन, कहानी, उपन्यास, पत्रकारिता, वैचारिक गद्य, यात्रावृत्तांत, जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण आदि अनेक गद्य विधाएँ इस काल में पहली पहली बार रची गईं। वैचारिक रूप से राष्ट्रवाद, भाषा प्रेम, समाज सुधार आदि अवधारणाएँ इस युग में पनपीं और विकसित हुईं और यह सब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के जन्म (1885 ई.) से बहुत पहले पर्याप्त रूप से फल-फूल गई थीं।

भारतेंदु हरिश्चन्द्र का रचनाकाल प्रथम स्वाधीनता संग्राम की छाया में सक्रिय हुआ, जिसे उस समय के अंग्रेज और स्वयं भारतेंदु भी 'बलवे' के रूप में याद करते हैं। राजनीतिक आन्दोलनों के आरंभ से पूर्व साहित्य में सक्रिय इन बुद्धिजीवियों की भूमिका को इस संदर्भ में देखना चाहिए। ऐसे काल में भारतेंदु ने 'भारत की दुर्दशा' की खोज की और उसके कारण बताए। उनके वैचारिक योगदान से पूर्व उनके साहित्यिक योगदान की चर्चा करना अधिक उपयोगी होगा।

भाषा की स्थिरता की दृष्टि से भारतेंदु का यह कथन महत्वपूर्ण है कि 1873 ई. में हिंदी 'नई चाल में ढला'। हिंदी का नई चाल में ढलना महत्वपूर्ण है। भारतेंदु ने खड़ी बोली हिंदी को गद्य की भाषा बनाया। इसके लिए उन्होंने साहित्यिक पत्रकारिता की शुरूआत की। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भारतेंदु युग में प्रकाशित होने वाली पच्चीस पत्र-पत्रिकाओं की सूची अपने ग्रन्थ 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में दी है, स्वयं भारतेंदु द्वारा प्रकाशित पत्र-पत्रिकाएँ हैं हरिश्चन्द्र चन्द्रिका, हरिश्चन्द्र मैग्जीन, कविवचनसुधा। इसके अलावा भारत मित्र, हिंदी प्रदीप, ब्राह्मण, सारसुधानिधि, आनंद कादंबिनी, हिंदोस्थान भारतजीवन, बिहार बंधु आदि मुख्य है।

इन पत्र-पत्रिकाओं ने समाज सुधार, देश-दशा, राष्ट्र प्रेम, भाषा प्रेम, शिक्षा का महत्व आदि विषयों पर वैचारिक गद्य के साथ सर्जनात्मक साहित्य को भी प्रकाशित किया। आधुनिक हिंदी साहित्य के लेखकों और पाठकों के मानस के निर्माण में इन पत्र-पत्रिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। ये पत्रिकाएँ संपादक-प्रकाशक के वैयक्तिक साधनों से ही प्रकाशित होती थीं। इनके पीछे किसी संस्था का हाथ नहीं था। आगे चलकर 'सरस्वती' पत्रिका को नागरी प्रचारिणी सभा का संबल प्राप्त हुआ।

भारतेंदु ने न केवल स्वयं साहित्य सर्जन किया वरन् ऐसे लेखकों की एक 'मंडली' तैयार की, जिन्होंने साहित्य के निर्माण में योगदान दिया। इन लेखकों में पं. प्रतापनारायण मिश्र बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन, ठाकुर जगमोहन सिंह, पं. बालकृष्ण भट्ट आदि मुख्य हैं, जो भारतेंदु की मृत्यु के बाद भी साहित्य में सक्रिय रहे। इस तरह भारतेंदु युग की सीमा 1900ई. तक चली जाती है। 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन और फिर महावीर प्रसाद द्विवेदी के आगमन के बाद हिंदी साहित्य के नए युग का प्रारंभ होता है।

अब तक आप इन निष्कर्षों से परिचित हो चुके होंगे -

1. भारतेंदु हरिश्चन्द्र आधुनिक हिंदी गद्य के प्रवर्त्तक माने जाते हैं।
2. वे मातृभाषा के प्रेम को राष्ट्र प्रेम का मूल मानते थे।
3. भारतेंदु काल में हिंदी गद्य के विविध रूपों का विधिवत आरंभ हुआ।
4. भारतेंदु ने हिंदी में साहित्यिक पत्रकारिता का प्रारंभ किया।
5. भारतेंदु ने हिंदी लेखकों का एक मंडल तैयार किया, जो उनके बाद भी सर्जनारत रहा।
6. भारतेंदु युग में काव्य की भाषा ब्रजभाषा और गद्य की भाषा खड़ी बोली थी।

2.7 प्रमुख रचनाकार

2.7.1 भारतेंदु हरिश्चन्द्र

भारतेंदु हरिश्चन्द्र का जन्म बनारस में सन् 1850 ई. में और मृत्यु 1885 ई में हुई। अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि के कारण अंग्रेज पदाधिकारियों और काशी नरेश से इनकी व्यक्तिगत मित्रता थी। सरकार की तरफ से होने वाले जलसों में स्थानीय रईसों के बुलाए जाने पर भारतेंदु का निमंत्रण पक्का हुआ करता था। युग के अन्य लेखकों की भाँति भारतेंदु भी बहुभाषाविद् थे। इन्हें संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू, बंगला, गुजराती, मराठी आदि अनेक भाषाएँ आती थीं। उन्होंने कई रचनाओं के अनुवाद भी किए। 1880 ई. में पं.रघुनाथ, पं.सुधाकर द्विवेदी, पं.रामश्वेरदत्त आदि के प्रस्ताव पर उन्हें भारतेंदु की पदवी प्रदान की गई, जिसे हिंदी संसार ने सहज ही स्वीकार कर लिया और अब वे इसी 'पदवी' के नाम से अधिक जाने जाते हैं।

आधुनिक हिंदी साहित्य के निर्माण में इनकी भूमिका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। इन्होंने कविता, नाटक, निबंध, प्रहसन, वैचारिक निबंध, गजल आदि अनेक विधाओं में लेखन किया। हिंदी रंगमंच के निर्माण में सहयोग देने के लिए कई बार स्वयं अभिनय भी किया। उनकी रचनाओं का संग्रह 'भारतेंदु समग्र' एवं 'भारतेंदु रचनावली' के नाम से उपलब्ध है। भारत-दुर्दशा, अँधेर नगरी, नीलदेवी इनकी चर्चित नाट्य कृतियाँ हैं।

इन्होंने हिंदी में साहित्यिक पत्रकारिता की नींव भी डाली। अपने विलक्षण व्यक्तित्व के कारण अपने समकालीन रचनाकारों की दृष्टि में ये आदरणीय थे और इनकी नेतृत्वकारी भूमिका को इनके समकालीन सभी लेखकों ने स्वीकार कर लिया था।

2.7.2 प्रतापनारायण मिश्र

प्रतापनारायण मिश्र का जन्म 1856 ई. और मृत्यु 1895 ई. में हुई। भारतेंदु मण्डल के ये महत्वपूर्ण लेखक थे। इनके पिता इन्हें ज्योतिष पढ़ाकर पैतृक व्यवसाय में रखना चाहते थे। परन्तु अपने मनमौजी स्वभाव के कारण इन्होंने इसे नहीं अपनाया। उस समय कानपुर लावनी बाजों का अड्डा था, और वे लावनी के शौकीन थे। उसी के प्रभाव में इन्होंने कविता लिखना प्रारंभ किया। कानपुर के 'रसिक समाज' में मिश्र जी समस्या पूर्ति किया करते थे, जिसमें सौंदर्य और श्रृंगार की पुराने ढंग की कविताओं की रचना हुआ करती थी।

इनकी विधिवत शिक्षा नहीं हो पाई, परन्तु लगन एवं स्वाध्याय से इन्होंने हिंदी, अंग्रेजी, उर्दू, फारसी और बंगला का अध्ययन किया। इन्होंने गद्य में नए ढंग की रचनाएँ कीं। इन्होंने नाटक, निबंध और वैचारिक गद्य प्रचुर मात्रा में लिखा। 'कैसा भी विषय हो, वे उसमें विनोद और मनोरंजन की सामग्री ढूंढ़ लेते' थे। इन्होंने कई वर्षों तक 'ब्राह्मण' पत्रिका का संपादन किया, जिसमें समाजसुधार, देश प्रेम, इतिहास, अर्थनीति आदि से संबंधित महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रकाशित की। इनकी 50 के लगभग रचनाएँ प्रकाशित हुईं, जो 'प्रतापनारायण मिश्र ग्रंथावली' में संकलित हैं। प्रेम पुष्पावली, मन की लहर, ब्रेडला स्वागत आदि इनकी चर्चित कृतियाँ हैं। हिंदी गद्य के निर्माण में इनका योगदान महत्वपूर्ण माना जाता है।

2.7.3 बालकृष्ण भट्ट

इनका जन्म इलाहाबाद में सन् 1844 और मृत्यु 1914 में हुई। भारतेंदु युग के अन्य लेखकों की तुलना में इनकी प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा व्यवस्थित रूप में हुई तथा कुछ वर्षों तक

इन्होंने संस्कृत का अध्यापन भी किया। इन्होंने लगभग 33 वर्षों तक प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका 'हिंदी प्रदीप' का संपादन किया। इसमें तत्कालीन समाज, राजनीति, धर्म व साहित्य संबंधी रचनाओं का प्रकाशन किया। इनकी रचनाओं में भी हास्य और व्यंग्य का पुट मिलता है। परन्तु आचार्य शुक्ल के अनुसार इनके व्यंग्य में चिड़चिड़ाहट' भी रहती है। 'कलिराज की सभा' और 'रेल का विकट खेल' शीर्षक चर्चित नाटकों के अलावा इन्होंने कई बंगला नाटकों का अनुवाद भी किया। इन्होंने 'नूतन ब्रह्मचारी', 'सौ अजान एक सुजान' आदि उपन्यास लिखे जिनमें समाजसुधार का स्वर हावी है। ये हिंदी के पहले साहित्य समीक्षक माने जाते हैं। भारतेंदु मण्डल के लेखकों में इनका नाम प्रतापनारायण मिश्र के साथ लिया जाता है। हिंदी गद्य की भाषा को व्यवस्थित रूप देने में इनका स्थान महत्त्वपूर्ण है।

2.7.4 बालमुकुन्द गुप्त

इनका जन्म हरियाणा के रोहतक जिले के गुड़ियाना गाँव में सन् 1865 में और मृत्यु 1907 में हुई। ये भारतेंदु युग और द्विवेदी युग को जोड़ने वाली कड़ी माने जाते हैं। ये मुख्यतः पत्रकार थे। आरंभ में इन्होंने 'अखबारे चुनार' और 'कोहिनूर' नामक दो उर्दू पत्रों का संपादन किया। बाद में 'बंगवासी' के संपादक और फिर 'भारतमित्र' के प्रधान संपादक बनाए गए। ये मिडिल पास थे तथा हिंदी, उर्दू और अंग्रेजी के अच्छे जानकार थे। ये अत्यंत निर्भीक और ओजस्वी लेखक थे। अपने समय के अत्यंत महत्त्वपूर्ण संपादक महावीर प्रसाद द्विवेदी से 'अनस्थिरता' शब्द को लेकर इनकी जबर्दस्त बहस हुई। जिसे हिंदी संसार ने बहुत गंभीरता से सुना और पढ़ा। इसी तरह लज्जाराम शर्मा मेहता से 'शेष' शब्द को लेकर लम्बी बहस हुई। फिर भी इनमें कटुता नहीं आई। समसामयिक विषयों पर इन्होंने निर्भीक टिप्पणियाँ की हैं। इस दृष्टि से इनकी दो पुस्तकें अत्यंत चर्चित हुई- 'शिवशम्भु के चिट्ठे' तथा 'चिट्ठे और खत'। इसमें इन्होंने लार्ड कर्जन को संबोधित करते हुए बहुत प्रभावशाली विचरोत्तेजक रचना की है।

2.7.5 श्रीधर पाठक

श्रीधर पाठक का जन्म सन् 1859 और मृत्यु सन् 1928 में हुई। इन्हें भी भारतेंदु युग और द्विवेदी युग की कड़ी के रूप में जाना जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इनको ही स्वच्छंदतावाद का सच्चा प्रवर्तक मानते हैं। हिंदी के अलावा ये संस्कृत और अंग्रेजी के भी अच्छे जानकार थे। इन्होंने अंग्रेजी और संस्कृत की रचनाओं के सुन्दर काव्यानुवाद किए हैं। ये ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों में रचनाएँ किया करते थे। ब्रजभाषा में इन्होंने समस्या पूर्ति और नायिकाभेद की परंपरा में रचनाएँ नहीं की। 'एकांतवासी योगी', 'उजड़ग्राम' तथा 'ऋतुसंहार' इनकी अनुवाद की चर्चित कृतियाँ हैं। अनुवाद भी महत्त्वपूर्ण, प्रभावशाली और साहित्य के इतिहास में उल्लेखनीय हो सकता है, यह पं. श्रीधर पाठक ने संभव किया। 'जगत सचाई सार', 'कश्मीर सुषमा', 'भारतगीत', 'गोखले प्रशस्ति' आदि इनकी चर्चित काव्य कृतियाँ हैं। इन्होंने पहली बार हिंदी में प्रकृति के आलंबन रूप का चित्रण किया। भारतेंदु युग के अन्य रचनाकारों से इनकी काव्य संवेदना विकसित एवं अलग दिखाई देती है।

बोध प्रश्न 2

4. भारतेंदु युग के प्रमुख लेखकों का परिचय दीजिए।

   ....

   ....

   ....

5. आधुनिक साहित्य के निर्माण में भारतेंदु हरिश्चंद्र की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

....

2.8 भारतेंदु युगीन कविता

भारतेंदु युग में काव्य भाषा के रूप में ब्रजभाषा ही स्वीकृत थी। इसलिए इस युग के प्रायः सभी कवियों ने ब्रजभाषा में काव्यरचनाएँ की। आधुनिक जीवन से जुड़ी हुई घटनाओं और बातों को उन्होंने खड़ी बोली में लिखा। स्वयं भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने अधिकतर पुरानी पद्धति की कविताएँ लिखीं। यह जरूर है कि पुराने ढंग की कविताओं में भी इस युग के कवियों ने रीतिकाल की नायिका भेद की परंपरा का अनुसरण नहीं किया, वरन् भक्तिकाल की मनोभूमि के अनुरूप कविताएँ लिखीं। 'चन्द्रावली' नाटिका में आई हुई कविताएँ इसका उत्तम उदाहरण हैं।

वैसे इस काल की महत्वपूर्ण कविताएँ वे ही मानी गई हैं जिनमें कई देश की गौरव गाथा का गर्व, वर्तमान अधोगति की क्षोभभरी वेदना, भविष्य की चिंता आदि की अभिव्यक्ति हुई हो। प्रतापनारायण मिश्र ने बुढ़ापा, हरगंगा, क्रंदन जैसे विविध विषयों पर कविताएँ लिखीं। उपाध्याय चौधरी बदरीनारायण प्रेमधन देश-दशा पर कविता लिखने के लिए विख्यात थे। 'दादाभाई नौरोजी के पार्लियामेंट के मेंबर होने के अवसर पर, महारानी विक्टोरिया की हीरक-जुबली के अवसर पर, नागरी के कचहरियों में प्रवेश पाने पर' उन्होंने कविताएँ लिखीं। विलायत में दादा भाई नौराजी को 'काले' कहे जाने पर उन्होंने 'कारे' शब्द पर बड़ी चर्चित कविता लिखी। ठाकुर जगमोहन सिंह ने परंपरागत विषयों पर कविताएँ लिखीं। इसी तरह इस काल में नागरीदास, नजीर अकबराबादी और श्रीधर पाठक की रचनाओं में हिंदी भाषा का नया रूप सामने आया।

2.9 मुख्य प्रवृत्तियाँ

विश्व के अन्य देशों की तरह भारत में भी साहित्य की रचना पद्य से शुरू होती है। पद्य की विशेषता लय एवं गति है और इस कारण इसे स्मरण भी रखा जा सकता है। गद्य की भाषा बोलचाल के निकट और व्याकरण सम्मत होती है। पहले साहित्य की रचना ब्रजभाषा में होती थी पर ब्रजभाषा का विकास संपर्क भाषा के रूप में नहीं हो पाया। खड़ी बोली संपर्क भाषा के रूप में विकसित हुई। तत्कालीन मुगल शासकों एवं सामन्तों ने भी खड़ी बोली गद्य के विकास में सहायता पहुँचाई। मुगल साम्राज्य के पतन के साथ साहित्यकार पूरबी शहरों में गए। गद्य की रचनाएँ होने लगीं। अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना एवं आधुनिक साधनों ने गद्य के विस्तार में महत्व भूमिका निभाई। आज खड़ी बोली हिंदी का साहित्य विश्व स्तर के साहित्य के समकक्ष है। वर्तमान रूप तक पहुँचने के लिए हिंदी भाषा को कठिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ा।

भारत में अंग्रेज़ों के आगमन एवं उनके द्वारा यहाँ की राजनीति पर अधिकार प्राप्त करने से यहाँ के विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन आया। हिंदी भाषा साहित्य में गद्य रचना की शुरूआत तो बहुत पहले हो चुकी थी। खड़ी बोली के विकास से गद्य के विकास में और सहायता मिली। भारतेंदु युग में खड़ी बोली का सहज सरल रूप सामने आया, वहीं गद्य की विविध विधाओं का प्रवर्तन भी हुआ। भारतेंदु ने तत्कालीन लेखकों को एक नई राह दिखाई। उस समय के लेखकों ने भारतेंदु द्वारा शुरू किए गए कार्य को ही आगे बढ़ाया। भारतेंदु युग

में परंपरागत साहित्य रचना का स्थान तो रहा ही साथ ही नवीनता का समावेश भी हुआ। इस युग में हिंदी में कई नई गद्य विधाओं का जन्म हुआ। उपन्यास, नाटक, कहानी, संस्मरण, आलोचना के आरंभ का श्रेय इस युग के लेखकों को जाता है। इसी तरह हिंदी पत्रकारिता की विधिवत शुरूआत भी इस युग में हुई। भारतेंदु युग में रचा गया साहित्य हमें यह दर्शाता है कि आज हिंदी साहित्य का स्तर जितना ऊँचा है उसे उस स्तर तक पहुँचाने में उस युग के लेखकों की क्या भूमिका रही।

भारतेंदु युग की कविताओं पर यदि हम दृष्टिपात करें तो कह सकते हैं कि उस काल के कवियों की कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जिनकी अभिव्यक्ति उस काल के सभी कवियों में मिलती है। ये प्रवृत्तियाँ किसी में कम हैं तो किसी में अधिक। अतः इन्हें समझने के लिए इन प्रवृत्तियों को जान लेना उपयोगी होगा।

2.9.1 राष्ट्र प्रेम

यदि हम रीतिकाल से आधुनिक काल में आते हैं, तो सबसे पहले हमें राष्ट्र प्रेम के विविध रूपों के दर्शन होते हैं। मध्यकाल की कविता में राष्ट्र प्रेम के दर्शन नहीं होते। यह माना जाता है कि एक भू-भाग में रहने वालों के हित समान है, इतिहास समान है, परंपरा समान है, भाषा समान है, संस्कृति समान है और सब लोगों की नियति भी समान तथा सामूहिक है। यह चेतना पहली बार भारतेंदु युग में दिखाई देती है। देश और विदेश की इस विभाजक रेखा की चेतना ने आगे चलकर साहित्य और संस्कृति को ही नहीं, वरन् समाज और राजनीति को भी प्रभावित किया। इसी चेतना के कारण भारतेंदु लिख सके कि अंग्रेज राज में बाकी सब ठीक है परंतु धन विदेश चला जाता है, यह बात बुरी लगती है।

यह प्रेम कहीं भारत की दुर्दशा की पीड़ा के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। कहीं 'हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान' के रूप में प्रकट हुआ है, कहीं समाज सुधार की आकांक्षा के रूप में दिखाई देता है। 'हमारो उत्तम भारत देस' (राधाचरण गोस्वामी), 'धन्य भूमि भारत सब रतननि को उपजावनि' (प्रेमधन) जैसी पंक्तियों में इस देश प्रेम को हम देख कर सकते हैं। भारतेंदु की 'विजयिनी विजय वैजयंती', राधाकृष्णदास की 'बारहमासा' और 'विनय', प्रतापनारायण मिश्र का 'महापर्व' जैसी कविताओं में इस देश प्रेम के विविध रूप अभिव्यक्त हुए हैं। इस काल के कवियों में भारतीय इतिहास के गौरवशाली पक्षों के उद्घाटन के साथ, वर्तमान अधःपतन की चेतना और इससे मुक्त होने की आकांक्षा भी अभिव्यक्त हुई है। इस काल की देश भक्ति के साथ-साथ राजभक्ति की भी अभिव्यक्ति हुई है। इस संदर्भ में ध्यान देने योग्य बातें यह हैं कि अंग्रेजी राज की तारीफ करते हुए रचनाकारों ने ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन की कहीं तारीफ नहीं की है, ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन समाप्त हो जाने के बाद, जब भारत को अंग्रेजी साम्राज्य में मिला लिया गया, तब नए आश्वासनों के संदर्भ में अंग्रेजी राज की प्रशंसा की गई, विशेष रूप से महारानी विक्टोरिया की प्रशंसा की गई। स्थानीय अंग्रेज शासकों के प्रति इस काल के कवियों ने शायद ही कहीं सकारात्मक टिप्पणी की हो। इस काल के कवियों ने मध्ययुगीन मुस्लिम शासकों की तुलना में तत्कालीन अंग्रेजी राज की प्रशंसा की है, लेकिन तब भी ये कवि भारत के गौरव गान को कहीं भूले नहीं हैं।

> हाय! वहै भारत-दुख भारी। सब ही विधि सों भई दुखारी।
> हाय! पंचनद, हा पानीपत। अजहुँ रहे तुम धरनि बिराजत।
> हाय चितौर! निलज तू भारी। अजहुँ खरो भारतहिँ मँझारी।

अंग्रेजों की इसलिए भी तारीफ की गई है कि उन्होंने जज़िया जैसा कर नहीं लगाया, शासन में कुछ सुधार किए, कानून की व्यवस्था ठीक करने का प्रयास किया। अंग्रेजों के

इन कदमों का समर्थन करते हुए पाठकों से भी शासन का सहयोग करने की अपील की जाती रही। इनमें भारतेंदु की 'भारत भिक्षा', 'विजय वल्लरी', प्रेमधन की 'हार्दिक हर्षादर्श', 'स्वागत', राधाकृष्णदास की 'मेक्डानल्ड पुष्पांजलि', 'जुबिली', अंबिकादत्त व्यास की 'जयति राजराजेश्वरी जय जय परमेश' कविता को लिया जा सकता है। इन कविताओं को आधार पर इस युग के कवियों में देश भक्ति और राजभक्ति के द्वंद्व के रूप में देखा गया है, परंतु इन कवियों ने राजभक्ति की आड़ में राष्ट्रभक्ति को ही जगाने का प्रयास किया है।

2.9.2 जिंदादिली

वर्तमान अधःपतन की चेतना के बावजूद इस काल के कवियों में निराशा का भाव नहीं मिलता। वे अपने दुःख पर हँसने की सामर्थ्य रखते हैं। इसलिए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस युग की सबसे बड़ी विशेषता इस 'जिंदादिली' को बताया है। कवि कविता में रोनी सूरत बनाकर नहीं आता। अपनी पूरी प्रतिभा और आत्मविश्वास के साथ विरोधी पर चोट करता है। अंग्रेजों का परिचय देते हुए भारतेंदु की मुकरी इस संदर्भ में द्रष्टव्य है –

भीतर भीतर सब रस चूसै, हँसि हँसि के तन मन धन मूसै।

जाहिर बातन में अति तेज, क्यों सखि सज्जन! नहिं अँगरेज।।

प्रेमधन का 'हास्य बिंदु' और प्रतापनारायण मिश्र का 'हरगंगा', 'बुढ़ापा' आदि कविताएँ इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। जहाँ पर भी इस युग के रचनाकार पीड़ा का वर्णन करते हैं, वहाँ हास्य-व्यंग्य के द्वारा इससे ऊपर उठ जाते हैं तथा पाठकों के आत्मबल को बनाए रखते हैं। इस दृष्टि से भारतेंदु युग के लेखकों ने हास्य और व्यंग्य का इस्तेमाल किया है। इस काल के कवि करारा व्यंग्य करने से बचते हैं, यदि कभी वैसा मौका भी आता है तो वे इसके आगे-पीछे कुछ ऐसा कह जाते हैं, जिससे व्यंग्य की इस चोट का प्रभाव कुछ कम हो जाता है। इसके लिए भारतेंदु परिहास का सहारा लेता है। भारतेंदु की मुकरियाँ इस परिहास वृत्ति का आदर्श उदाहरण है। परिहास में भी बातें तो वही कही जाती हैं जो व्यंग्य में कही जाती हैं। व्यंग्य में कही गई बातों की चोट लगती है – और चोट बुरी लगती है परंतु परिहास में बातें बुरी नहीं लगती – लगती हैं तो भी उसकी अभिव्यक्ति नहीं की जाती। परिहास का आनंद आता है। परिहास का व्यक्ति भी ज्यादा बुरा नहीं मानता। हालाँकि पाठक को सब बात सहज रूप में समझ में आ जाती है। परिहास में स्थितियों को स्वीकार कर लिया जाता है। परिवर्तन की आकांक्षा नहीं होती। स्थितियों की विडंबना होती है – इस विडंबना को हँस कर टाल दिया जाता है। यह समझ धीरे-धीरे व्यंग्य और बाद में जीवन दृष्टि में – समझ में – मूल्य विवेक में बदल जाती है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मत है 'हरिश्चंद्र तथा उनके समसामयिक लेखकों में जो एक सामान्य गुण लक्षित होता है वह है सजीवता या जिंदादिली। सबमें हास्य या विनोद की मात्रा थोड़ी या बहुत पाई जाती है। राजा शिव प्रसाद और राजा लक्ष्मण सिंह भाषा पर अधिकार रखने वाले झंझटों से दबे हुए स्थिर प्रकृति के लेखक थे। उनमें वह चपलता, स्वच्छंदता और उमंग नहीं पाई जाती जो हरिश्चंद्र मंडल के लेखकों में दिखाई पड़ती है।'

2.9.3 सामाजिक चेतना

रीतिकाल के उपरांत जब हम भारतेंदु युग की कविताओं का अध्ययन करते हैं, तब हमें समाज के सामूहिक जीवन की चिंता पहली बार दिखाई देती है। रीतिकाल में आश्रयदाता राजाओं के दरबार का चित्रण हुआ करता था। परंतु जनजीवन के चित्रण की तरफ उनकी रुचि नहीं थी। समाज की उन्नति के लिए इन कवियों ने प्रयास किए। नारी-शिक्षा की

आवश्यकता, बाल विवाह का विरोध, विधवा जीवन की कठिनाइयाँ आदि विषयों पर इन्होंने कविताएँ लिखीं। ऐसी कविताएँ अब से पहले नहीं लिखी गई थीं। हालाँकि इन सभी सामाजिक समस्याओं के प्रति सभी कवियों की दृष्टि समान नहीं थीं। उनमें पर्याप्त मत-भिन्नता थी। कई बार उनके विचार मान्य प्रगतिशील विचारों से मेल नहीं खाते थे। फिर भी उन्होंने इन समस्याओं की चिंता की, यह महत्वपूर्ण है।

समाज सुधार आंदोलनों के प्रभाव से हिंदी में इन विषयों के प्रति जागरूकता उत्पन्न हो चुकी थी। वर्णाश्रम धर्म की संकीर्णता और उदारता पर विचार-विमर्श प्रारंभ हो चुका था। भारतेंदु ने छुआछूत का विरोध करते हुए लिखा, 'बहुत हमने फैलाए धर्म, बढ़ाया छुआछूत का कर्म।' दूसरी तरफ अंबिकादत्त व्यास ने वर्णाश्रम धर्म का दृढ़तापूर्वक समर्थन किया। कुछ लेखकों ने प्राचीन शास्त्रों और नीतियों में संशोधन की आवश्यकता पर बल दिया, परंतु राधाचरण गोस्वामी ने प्राचीन शास्त्रों का पुरजोर समर्थन किया और यहाँ तक कि विधवा विवाह का विरोध किया। प्रतापनारायण मिश्र ने 'कौन करेजो नहि कसकत सुनि विपत्ति बाल विधवन की' लिखकर बाल विधवाओं के पुनर्विवाह का समर्थन किया। इस तरह कहा जा सकता है कि विभिन्न सामाजिक समस्याओं और समाज सुधार के प्रति इस युग के लेखकों में दृष्टिगत एकता नहीं थी, गंभीर मतभेद बने हुए थे, तब भी उन्होंने इन समस्याओं को कविता का विषय बनाना प्रारंभ किया, जिसके कारण आगे चलकर द्विवेदी युग और प्रेमचंद की रचनात्मकता को आधार मिला। कविताओं के अलावा, निबंधों, नाटकों और उपन्यासों में भी समाज सुधार की यह आकांक्षा अभिव्यक्त हुई है। वर्तमान अधःपतन के कारणों की खोज में सामाजिक जीवन की विभिन्न समस्याओं की ओर भी लेखकों का ध्यान गया। इन समस्याओं का संबंध भारत में अंग्रेजी राज से नहीं है। अतः अंग्रेजों से संघर्ष करने के लिए, संघर्ष से पहले एवं संघर्ष के साथ-साथ समाज - सुधार की तरफ भी देश का ध्यान जाना चाहिए, इस बात को इस काल के कवियों ने रेखांकित किया।

2.9.4 भक्ति भावना

इस काल की परंपरागत ब्रजभाषा की कविता में धार्मिक भावना की प्रबल अभिव्यक्ति हुई है। कई बार वे अंग्रेजी राज को क्रिस्तान के राज के रूप में देखते हैं और मध्यकाल को इस्लाम के शासन के रूप में याद करते हैं। प्रतापनारायण मिश्र की प्रस्तुत पंक्तियाँ इस युग के लेखकों की मानसिकता को स्पष्ट करती हैं -

> चहहु जु साँचहु निज कल्यान, तौ सब मिलि भारत सन्तान।
> जपो निरंतर एक जबान, हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान।।

अपने धार्मिक विश्वासों के प्रति आग्रह होते हुए भी इस काल के कवियों ने अन्य धर्मों की धार्मिक आलोचना नहीं की है, वरन् अन्य धर्मों के महात्माओं का आदर पूर्वक उल्लेख किया है। अन्य धर्मों से तुलना करते हुए उन्होंने हिंदुओं से अपनी उन्नति का आग्रह किया है। अतः कहा जा सकता है कि इस काल के कवियों की भक्ति भावना सांप्रदायिक नहीं थी। वे अपने इष्ट देवों पर आस्था रखते थे तथा उनका परंपरागत रूप से गुणगान करते थे।

इस काल के कवियों ने निर्गुण भक्ति के स्थान पर वैष्णव भक्ति परंपरा में अधिक आस्था व्यक्त की है। हालाँकि कई स्थानों पर उन्होंने निर्गुण परंपरा का वर्णन भी किया है। राधाकृष्ण दास ने लिखा -

> जो विषया संतन तजि, ताहि मूढ़ लपटात।
> जो नर डारत वमन करि, स्वान स्वाद सों खात।।

अधिकतर कवियों ने राम, कृष्ण और अन्य देवी देवताओं की आराधना की है। इनमें भी राम की तुलना में कृष्ण के प्रति कवि अधिक आकृष्ट हुए हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र वैष्णव भक्ति परंपरा के अनन्य समर्थक थे। वे कहते थे, 'मेरे तो साधन एक ही हैं, जग नंदलला वृषभानु-दुलारी'। धार्मिक मतभेदों के संदर्भ में उनका मत था – 'अपुनो अपुनो मत लै लै सब झगरत जयौं मठि हारे'। उर्दू पद शैली के अनुरूप उनकी एक रचना दृष्टव्य है –

> ढूँढ़ा फिर मैं इस जग में पश्चिम से ले पूरब तक।
> कहीं न पायी मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक।
> मसजिद मंदिर गिरजों में देखा मतवालों का जो दौर।
> अपने अपने रंग में रँगा दिखाया सबका तौर!
> सिवा झूठी बातों व बनावट के न नजर आया कुछ और!

प्रेमघन की 'अलौकिक लीला', प्रतापनारायण मिश्र की 'नवरात्र के पद' राधाचरण गोस्वामी की 'नव भक्तमाल' आदि उस युग की महत्वपूर्ण कविताएँ हैं।

इस काल के कवियों ने भक्ति को सिर्फ वैयक्तिक पूजा-अर्जन तक ही सीमित नहीं रखा है, वरन् उसका संबंध देशप्रेम से भी जोड़ा है। वे ईश्वर से भारत भूमि के कष्टों के निवारण का आग्रह करते हैं। प्रतापनारायण मिश्र ने 'हम आरत भारतवासिन पै अब दीनदयाल दया करिये' तथा राधा कृष्णदास ने 'अपने या प्यारे भारत के पुनि दुख दारिद हरिए' में धार्मिक भक्ति को देश भक्ति से एकाकार करने का प्रयास किया है। भारतेंदु की 'प्रबोधिनी' शीर्षक कविता में 'डूबत भारत नाथ बेगि अब जागो' में यही भाव अभिव्यक्त हुआ है।

2.9.5 रीतिकालीन श्रृंगारिकता

जहाँ तक रीतिकालीन काव्य रुचियों का प्रश्न है, आधुनिक काल की यह प्रमुख अभिरुचि नहीं थी। परंपरा का पालन करते हुए कवियों ने वैसी कविताओं की रचनाएँ अवश्य की हैं। इस काल में समस्यापूर्ति, कवि समाज आदि की परंपरा पूर्ववत चल रही थी। छोटे-बड़े शहरों में स्थानीय स्तर पर कवि समाज के रूप में कई मंच पर सक्रिय थे, जहाँ नियमित रूप से कविगोष्ठियाँ, समस्या पूर्ति की प्रतियोगिताएँ आयोजित होती रहती थीं। इस तरह की सभी कविताओं की भाषा ब्रजभाषा ही थी। खड़ी बोली में रीतिकालीन परंपरा की कविताएँ इस काल में किसी कवि ने नहीं लिखीं।

इस काल के लगभग सभी कवियों ने श्रृंगार रस की कविताएँ लिखी हैं, इस मामले में प्रतापनारायण मिश्र अपवाद कहे जा सकते हैं। श्रृंगार रस की दृष्टि से ठाकुर जगन्मोहन सिंह की कविताएँ अधिक सरस और रोचक हैं –

> अब यों उर आवत है सजनी, मिलि जाउँ गरे लगि कै छतियाँ।
> मन की कटि भाँति अनेकन औ मिलि कीजिय री रस की बतियाँ।
> हम हारि अरी करि कोटि उपाय, लिखी बहु नेह भरी पतियाँ।
> जगमोहन मोहनी मूरति के बिना कैसे कटें दुख की रतियाँ।

रीति निरूपण पद्धति की दृष्टि से देखा जाए तो इस काल के कवियों ने इसमें विशेष रुचि नहीं दिखलाई। लच्छिराम ब्रह्मभट्ट, कविराजा मुरारिदान आदि छिटपुट कवियों ने ही इस तरह की रचनाएँ की हैं, जो उल्लेखनीय नहीं हैं। समस्या पूर्ति की दृष्टि से कानपुर के रसिक समाज में 'पपीहा जब पूछिहै पीव कहाँ' की प्रतापनारायण मिश्र द्वारा की गई प्रस्तुत समस्यापूर्ति की बहुत सराहना की गई तथा उसे अनेक प्रसंगों में उद्धृत किया जाता रहा है –

बन बैठि है मान की मूरति-सी, मुख खोलत बोलै न 'नाहीं' न 'हाँ'।
तुम ही मनुहारि कै हारि परे, सखियान की कौन चलाई तहाँ।।
बरषा है 'प्रतापजु' धीर धरौ, अब लौं मन को समझायो जहाँ।
यह प्यारी तबै बदलेगी कछु, पपीहा जब पूछिहै 'पीव कहाँ' ?

यहाँ यह स्पष्ट कर देना उपयोगी होगा कि समस्या पूर्ति में समस्या के रूप में 'आधी पंक्ति ' कवि को दे दी जाती थी, उस आधी पंक्ति के आधार पर संपूर्ण पद की रचना करनी होती थी। रचना कुछ इस तरह से की जानी आवश्यक थी कि वह आधी पंक्ति उस पद का स्वाभाविक अंग लगे। रीति काल में कवियों में काव्य कौशल को विकसित करने के लिए यह परंपरा प्रारंभ हुई थी, जिसे इस काल में भी चलाया गया।

2.9.6 अनुवाद

इस युग में हिंदी में अनुवाद की परंपरा का भी सूत्रपात हुआ। राजा लक्ष्मण सिंह के अनुवाद के पश्चात् भारतेंदु ने भी कुछ अनुवाद किए। बाबू तोताराम ने वाल्मीकि रामायण का 'राम-रामायण' शीर्षक से अनुवाद किया। ठाकुर जगन्मोहन सिंह ने 'ऋतु संहार' और 'मेघदूत ' का अनुवाद किया। संस्कृत अनुवादों के साथ अंग्रेजी की कृतियों के काव्यानुवाद भी इस काल में हुए। इस दृष्टि से श्रीधर पाठक ने गोल्ड स्मिथ की दो कृतियों - 'हरमिट' और 'डेजर्टेट विलेज' का अनुवाद 'एकांतवासी योगी' और 'ऊजड़ ग्राम' शीर्षक से किया, जो उस समय बहुत चर्चित हुआ। इस काल में शब्दानुवाद की प्रथा का निर्वाह नहीं किया जाता था, वरन् कविता के भाव का अनुवाद करने का प्रचलन था। इस अनुवाद में कवि अपनी तरफ से भी कई मौलिक उद्‌भावनाएँ जोड़ दिया करते थे, जिससे अनूदित सामग्री को हिंदी के पाठक सहज ही समझ सकें। यह अवश्य है कि अनुवाद करते समय रचनाकार मूल कृति के अर्थ को ही संप्रेषित करते थे। इस युग में अनुवाद का कार्य हिंदी के रचनाकारों द्वारा ही किया गया, व्यावसायिक अनुवाद का प्रचलन तब तक नहीं हुआ था।

2.9.7 काव्य रूप

भारतेंदु युग के लेखकों ने साहित्य की विविध विधाओं और रूपों में रचनाएँ की हैं। गद्य की अनेक विधाओं का जन्म इस काल में हुआ, उदाहरणार्थ उपन्यास, निबंध, एकांकी, प्रहसन, यात्रा-वृत्तांत, संस्मरण, जीवनी, आलोचना आदि। इनके बारे में आधुनिक हिंदी गद्य से संबंधित इकाइयों में आप विस्तार से पढ़ेंगे। कविता के क्षेत्र में भी इस काल के लेखकों ने अनेक प्रयोग किए। इस काल के कवियों ने प्रबंध काव्यों की रचना में बहुत कम रुचि दिखाई। एक-दो अपवादों को छोड़कर लगभग सभी कवियों ने मुक्तक रचनाएँ की। मुक्तक रचनाओं में इन्होंने कई नई रचना पद्धतियों का इस्तेमाल किया 'हिंदी भाषा' और 'विजयिनी विजय वैजयंती' को निबंध काव्य की श्रेणी में रख सकते हैं। अधिकतर इन्होंने प्रगीत मुक्तकों की रचना की। ठुमरी, दादरा आदि विभिन्न राग-रागिनियों पर आधारित कविताएँ भी इस युग में प्रचुर मात्रा में लिखी गईं। सतसई परंपरा का निर्वाह भी कुछ कवियों ने किया। इसके साथ-साथ लोक गीतों की तर्ज पर भी इन्होंने रचनाएँ की। प्रतापनारायण मिश्र की लावनियाँ और भारतेंदु की मुकरियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। कविता में हास्य-व्यंग्य का भी इन्होंने उपयोग किया है। 'उर्दू का स्यापा' और 'बंदर सभा' इस तरह की चर्चित रचनाएँ रही हैं। इसके साथ-साथ इस काव्य के कई कवियों ने उर्दू काव्य रूपों में भी सर्जन किया। भारतेंदु 'रसा' और प्रेमधन 'अब्र' उपनाम से उर्दू में गजल की रचनाएँ किया करते थे। इसके अलावा कसीदा, शेर, मरसिया आदि की रचनाएँ भी इस काल में

हुईं। यह अवश्य है कि इस काल के कवि छंदोबद्ध रचनाएँ ही किया करते थे। मुक्त छंद का प्रचलन इस काल में नहीं हुआ था।

2.10 भारतेंदु युगीन गद्य

नाटक

भारतेंदु हरिश्चन्द्र से पूर्व हिंदी में 'नाटक' विधा के नाम से दो-एक रचनाएँ मिलती है। नाटक लेखन का आरंभ हिंदी में अनुवाद के द्वारा हुआ। बंगला और अंग्रेजी के कई नाटकों के अनुवाद स्वयं भारतेंदु ने किए थे। उनके प्रसिद्ध नाटकों में 'भारत दुर्दशा', 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'श्री चन्द्रावली', 'अँधेर नगरी' आदि है। लाला श्रीनिवासदास का 'प्रह्लाद चरित्र', 'रणधीर प्रेममोहिनी', 'संयोगिता स्वयंवर', प्रतापनारायण मिश्र का 'हमीर हठ', 'जुआरी-खुआरी', राधाचरण गोस्वामी का 'सती चन्द्रावली', 'अमरसिंह राठौर' आदि चर्चित नाटक हैं। इन नाटकों में ऐतिहासिक, पौराणिक और समकालीन जीवन के कथानकों का उपयोग किया गया है। ये नाटककार कभी-कभी स्वयं अभिनय भी करते थे। नाटक को समाज सुधार का माध्यम मानते थे।

निबंध

नाटकों के अलावा इस युग के लेखकों ने बड़ी मात्रा में निबंध साहित्य की रचनाएँ की। ये रचनाएँ उस युग की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। इसके अलावा शुद्ध वैचारिक गद्य की रचनाएँ भी इस काव्य में प्रचुर मात्रा में हुई। भारतेंदु के अलावा बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बदरीनारायण चौधरी प्रेमधन, बाल मुकुन्द गुप्त आदि अनेक लेखकों ने निबंधों का लेखन किया। इन निबंधों में उनकी जिंदादिली, परिहास वृत्ति, व्यंग्य, एवं समाज सुधार की वृत्ति दिखलाई पड़ती है।

उपन्यास

नाटकों की तरह हिंदी उपन्यास के आरंभ में अनुवादों का बोलबाला रहा। बंगला और अंग्रेजी से कई रचनाओं के अनुवाद तो हुए ही, हिंदी में मौलिक उपन्यासों का प्रारंभ भी भारतेंदु युग में ही हुआ। गौरीदत्त कृत 'देवरानी-जिठानी' (1870 ई.) श्रद्धाराम फुल्लौरी कृत 'भाग्यवती' (1877ई.) और लाला श्री निवासदास कृत 'परीक्षागुरू' (1882 ई.) प्रारंभिक उपन्यास हैं। इसके अलावा किशोरी लाल गोस्वामी ने अनेक उपन्यासों की रचना की। इसी युग में ऐय्यारी और जासूसी उपन्यास भी लिखे गए। इस श्रेणी में देवकीनंदन खत्री के उपन्यास चंद्रकांता 'चन्द्रकांता संतति' और 'भूतनाथ' का ऐतिहासिक महत्व है। इनके बारे में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का चर्चित मत है कि 'हिंदी साहित्य के इतिहास में बाबू देवकी नंदन का स्मरण इस बात के लिए सदा बना रहेगा कि जितने पाठक उन्होंने उत्पन्न किए उतने किसी और ग्रंथकार ने नहीं। चन्द्रकांता पढ़ने के लिए ही न जाने कितने उर्दू जीवी लागों ने हिंदी सीखी।' प्रेमचंद से पूर्व हिंदी उपन्यास की दो प्रमुख प्रवृत्तियाँ थीं - एक समाज सुधार हेतु लिखित उपन्यास और दूसरे मनोरंजन प्रधान ऐय्यारी और जासूसी उपन्यास। प्रेमचंद ने इन दोनों परंपराओं को आगे बढ़ाया।

अन्य विधाएँ

कहानी साहित्य का प्रारंभ भारतेंदु हरिश्चन्द्र से पूर्व हो चुका था। इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' तथा राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद की 'राजा भोज का सपना' और 'वीरसिंह का वृत्तांत' को आधुनिक कहानी के अंतर्गत माना जाता है। भारतेंदु युग

के लेखकों ने कहानी के विकास में कोई उल्लेखनीय योग नहीं दिया। हिंदी कहानी का वास्तविक आरंभ और विकास द्विवेदी युग में 'सरस्वती' पत्रिका के संपादन के साथ ही हुआ। पं. किशोरी लाल गोस्वामी की 'इंदुमती' कहानी इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।

इसी तरह आलोचना का विकास भी आगे चलकर द्विवेदी युग में ही हुआ। हालाँकि पुस्तक समीक्षा का प्रारंभ भारतेंदु युग में हो चुका था। भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने 1883 ई. में 'नाटक' पर एक सैद्धांतिक लेख लिखा। इसी तरह लाला श्री निवासदास के नाटक 'संयोगिता स्वयंवर' की चौधरी बद्रीनारायण प्रेमधन ने तीखी आलोचना की, जिसकी चर्चा उस युग के लेखकों में लगातार चलती रही। पत्र-पत्रिकाओं में पुस्तकों की परिचयात्मक जानकारी अवश्य छपती रहती थी, उसे आज आलोचना की श्रेणी में नहीं रखा जाता। यात्रा वृत्तांत, संस्मरण आदि विधाओं का आरंभ भी इस युग में हो चुका था।

बोध प्रश्न

6. भारतेंदु युग की मुख्य प्रवृत्तियों को उद्‌घाटित कीजिए।

....

....

....

7. भारतेंदु युग में रचित गद्य विधाओं का परिचय दीजिए।

....

....

....

8. भारतेंदु युग का ऐतिहासिक महत्व उद्‌घाटित कीजिए।

....

....

....

2.11 सारांश

अब तक बताई गई बातों का निष्कर्ष इस प्रकार है -

- भारतेंदु युग से आधुनिक हिंदी साहित्य का प्रारंभ हुआ। साहित्य में आधुनिकता का सूत्रपात खड़ी बोली के गद्य से हुआ।
- आधुनिक साहित्य का प्रारंभ भारत में अंग्रेजी राज की स्थापना और विरोध से जुड़ा हुआ है इसलिए यह राष्ट्रीय जागरण का साहित्य है।
- खड़ी बोली गद्य के निर्माण में फोर्ट विलियम कॉलेज और इसाई मिशनरियों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- भारतेंदु ने निज भाषा प्रेम को देश प्रेम से जोड़कर देखा। इस तरह हिंदी भाषा की उन्नति को राष्ट्रीय उन्नति का कार्य मानकर लेखन किया।

- भारतेंदु काल में उपन्यास, नाटक, निबंध, यात्रा वृत्तांत, संस्मरण, आलोचना आदि अनेक नई गद्य विधाओं का जन्म हुआ। इसके साथ ही साहित्यिक पत्रकारिता का जन्म भी इसी काल में हुआ।
- इस काल में कविता की भाषा ब्रजभाषा तथा गद्य की भाषा खड़ी बोली के रूप में प्रचलन में रही। इसी तरह परंपरागत काव्य विषय ब्रजभाषा में तथा देश-दशा से जुड़े हुए विषय खड़ी बोली में अभिव्यक्ति पाते रहे।
- इस काल के प्रमुख लेखक भारतेंदु हरिश्चंद्र, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, ठाकुर जगन्मोहन सिंह, राधाकृष्णदास, बालमुकुंद गुप्त, श्रीधर पाठक, राधाचरण गोस्वामी थे।
- इस काल के साहित्य में राजभक्ति और देश भक्ति, भक्ति भावना, रीतिकालीन काव्य परंपरा, जिंदादिली, हास्य व्यंग्य समाज-सुधार आदि की प्रवृत्तियाँ प्रमुख थीं।
- भारतेंदु युग में ब्रजभाषा की कविता का प्राधान्य होते हुए भी खड़ी बोली में कविताएँ लिखी जाती रही हैं।
- भारतेंदु ने लेखकों का एक समूह तैयार किया जिसे भारतेंदु मंडल के नाम से जाना जाता है। इनमें प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, चौधरी बदरीनारायण प्रेमधन आदि मुख्य हैं।
- गद्य की विभिन्न विधाओं का शुभारंभ इस काल में हुआ।

2.12 उपयोगी पुस्तकें

हेमन्त शर्मा, संपादक, **भारतेंदु समग्र प्रचारक ग्रंथावली परियोजना**, हिंदी प्रचारक संस्थान, बनारस।

किशोरी लाल गुप्त, **भारतेंदु और अन्य सहयोगी कवि**, हिंदी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस।

हजारी प्रसाद द्विवेदी, **हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास**, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली।

रामचंद्र शुक्ल, **हिंदी साहित्य का इतिहास**, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

2.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखें भाग 2.1
2. देखें उपभाग 2.2.1
3. देखे उपभाग 2.2.2
4. देखें भाग 2.7
5. देखें भाग 2.6 एवं उपभाग 2.7.1
6. देखें भाग 2.9
7. देखें भाग 2.10
8. देखें भाग 2.6

इकाई 3 द्विवेदी युग

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 द्विवेदी युगीन हिंदी साहित्य की पृष्ठभूमि

3.2.1 राजनीतिक पृष्ठभूमि

3.2.2 सामाजिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि

3.2.3 साहित्यिक पृष्ठभूमि

3.3 युगीन साहित्यकार

3.3.1 गद्य साहित्यकार

3.3.2 पद्य साहित्यकार

3.4 द्विवेदी युगीन साहित्यिक प्रवृत्तियाँ

3.4.1 विषयों की व्यापकता

3.4.2 राष्ट्रीय जागरण, देशभक्ति, सुधार

3.4.3 मानवतावादी दृष्टिकोण

3.5 द्विवेदी युगीन साहित्य का महत्व

3.6 सारांश

3.7 शब्दावली

3.8 उपयोगी पुस्तकें

3.9 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

प्रथम खंड की इस अंतिम इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- द्विवेदी युगीन हिंदी साहित्य की पृष्ठभूमि का विश्लेषण कर सकेंगे;
- द्विवेदी युग से भारतेंदु युग का संबंध बता सकेंगे;
- द्विवेदी युगीन साहित्यकारों के बारे में बता सकेंगे;
- इस युग की साहित्यिक प्रवृत्तियों का परिचय दे सकेंगे; और
- द्विवेदी युगीन साहित्य का महत्व स्पष्ट कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

इस खंड की पिछली इकाई में आपने 'भारतेंदु युग' का अध्ययन किया है। आपने देखा कि किस प्रकार भारतेंदु जैसे व्यक्तित्व के आगमन से हिंदी साहित्य को नयी दिशा मिली। हिंदी साहित्य में गद्य विधाओं का प्रारंभ करके उन्होंने भाषा साहित्य को आगे बढ़ाने का

महान् कार्य किया किंतु खड़ी बोली में साहित्य रचना का जो रूप उन्होंने दिया था उसमें विकृति आती गई। भाषा की अच्छी जानकारी नहीं रहने पर अनुवाद के कार्य में त्रुटियाँ आती गईं। भाषा साहित्य के क्षेत्र में अराजकता एवं उच्छृंखलता का वातावरण बन गया। ऐसे समय में महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसे व्यक्तित्व का आगमन होता है। उन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से हिंदी को अराजकता के घेरे से बाहर निकाला। लेखकों को अपने अनुशासन से ठीक किया। भाषा-साहित्य को परिमार्जित एवं सरल रूप प्रदान करने का उनका कार्य चिरस्मरणीय बन गया। यहाँ हम उनके कार्यों का विश्लेषण करेंगे जिनसे तत्कालीन साहित्य की रचना हुई। इकाई में हम उस दौर के महत्वपूर्ण साहित्यकारों का परिचय प्राप्त करेंगे तथा उनकी कृतियों की जानकारी भी हासिल करेंगे। द्विवेदी युग में किन-किन विषयों को साहित्य में स्थान दिया गया उसकी भी चर्चा की जाएगी तथा अंत में युगीन साहित्य के महत्व को स्पष्ट किया जाएगा। आइए, सर्वप्रथम तत्कालीन परिस्थितियों की जानकारी हासिल करें।

3.2 द्विवेदी युगीन हिंदी साहित्य की पृष्ठभूमि

किसी कालखण्ड विशेष की परिस्थितियाँ साहित्य पर प्रभाव डालती हैं। आपने देखा कि किस प्रकार भारतेंदु युग में उस समय की परिस्थितियों का प्रभाव साहित्य पर पड़ा। द्विवेदी युग में भी तत्कालीन परिस्थितियों ने युग के साहित्य पर प्रभाव डाला। आइए हम एक-एक कर तत्कालीन परिस्थितियों पर विचार करें।

3.2.1 राजनीतिक पृष्ठभूमि

भारतेंदु युग में राष्ट्रीय चेतना का विकास हो चुका था किंतु उस समय उसमें वह उमंग नहीं थी जो द्विवेदी युग में आरंभ हुई। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने पर लोगों को पश्चिम की विचारधारा का पता चला। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रसार से नवजागरण की लहर दौड़ गई। राष्ट्र के उत्थान की भावनाओं के विकास से राजनीतिक क्षेत्र में क्रांति फैल गई। अंगेजों की नीतियों से जनता के अंदर आवेश बढ़ता गया। भारतीय जनता को जो कांग्रेस के रूप में एक मंच मिला था उसमें दो दल उभरने लगे। एक गरम दल था और दूसरा नरम दल। तिलक एवं गोखले क्रमशः गरम एवं नरम दल के नेता थे। प्रारंभ में कांग्रेस के भीतर नरम दल का प्रभाव अधिक था। सविनय आंदोलन द्वारा अंग्रेजों का विरोध किया जाता था। 1892 ई. में दादाभाई नौरोजी ब्रिटिश पार्लियामेंट के सदस्य चुने गए। किंतु अंगेज़ों की दमनकारी नीति में कोई कमी नहीं आई। उधर , अकाल, टैक्स एवं महामारी से जनता त्राहि-त्राहि कर रही थी। 1896 ई. में भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा। सरकार की सैनिक कार्रवाई से भी जनता परेशान थी। 1897 ई. में भूकम्प और प्लेग के कारण तो वर्णनातीत तबाही हुई। प्लेग फैलने के समय अफसर मि. रैण्ड की हत्या हुई। लेफ्टिनेंट एअरर्ट की हत्या भी इसी समय हुई। अंग्रेजों ने इन हत्याओं की शंका में चिपेकर बंधुओं को दण्डित किया। बलवंतराव नातू तथा हरियल रामचंद्र नातू को सरकार ने इसलिए निर्वासित किया क्योंकि उन्होंने प्लेग में हुई बर्बादी और फौजियों की ज्यादतियों को प्रकाशित कर जनता तक पहुँचाया था। उधर तिलक ने जनजागरण के लिए 1893 ई. में गणेश उत्सव तथा 1897 ई. में 'शिवाजी उत्सव' शुरू किया। मराठी भाषा में 'केसरी' और अंग्रेज़ी भाषा में 'मराठा' पत्र का प्रकाशन करके उन्होंने जनता में एक नई चेतना फैलाने का कार्य किया। यूँ तो किसी युग के लिए तिथिवार कोई सीमा नहीं बाँधी जा सकती है। किंतु कुछ महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों को ध्यान में रख कर समय सीमा का अनुमान लगाया जा सकता है। द्विवेदी युग के लिए भी ऐसा ही माना जा सकता है। लगभग सन् 1900 से सन् 1920 तक के काल को द्विवेदी युग के नाम से जाना जाता है। भारत के राजनीतिक क्षेत्र में

यह समय बहुत ही उथल-पुथल का रहा। ऊपर कुछ की चर्चा की गई है। हम यहाँ कुछ और घटनाओं की चर्चा करेंगे जिससे स्पष्ट पता चल जाएगा कि इस अवधि के राजनीतिक क्षेत्र में क्या उतार-चढ़ाव आए। सन् 1898 ई. में लॉर्ड कर्जन भारत का वायसराय बन कर आया। उसी समय प्लेग जैसी महामारी भी फैली। 1899 से 1900 के बीच भीषण अकाल पड़े जिससे बहुत अधिक जान माल की बर्बादी हुई। लॉर्ड कर्जन साम्राज्यवादी नीति का कट्टर समर्थक था। उसके कार्यों से जनता को घोर कष्ट उठाना पड़ा। तिब्बत सैनिक अभियान का खर्च भारतीय जनता को उठाना पड़ा। उसकी शिक्षा संबंधी नीतियों द्वारा यहाँ की जनता को हानि ही हानि हुई। 20 जुलाई 1905 ई. को बंग भंग करके उसने जन आंदोलन का मार्ग प्रशस्त कर दिया। प्रवास संबंधी बिल (1907), सभा बन्दी कानून (1908), प्रेस एक्ट (8 जून 1908 ई.) आदि के कारण जनता का रोष बढ़ता ही गया। एक ओर दमन बढ़ा तो दूसरी ओर जनता द्वारा प्रतिकार के कार्य भी आरंभ हुए। 'युगान्तर' और 'सन्ध्या' पत्रिका द्वारा जागरण का विस्तार किया गया तो 'वन्देमातरम्' के नारे द्वारा जनता के अंदर जोश और उमंग को बुलंद किया गया। सन् 1905 ई. में लॉर्ड मिन्टो भारत का वायसराय बन कर आया। उसने आते ही भारतीयों पर दमनचक्र तेज कर दिया।

'वंदेमातरम्' शब्द पर नियंत्रण लगाकर जनता की आवाज को बंद करने का षड्यंत्र रचा। 'मिन्टो-मोर्ले' सुधार द्वारा अंग्रेज़ भेद नीति को ही कायम रखना चाहते थे। एक ओर तो राष्ट्रीय आंदोलन का प्रसार हो रहा था दूसरी ओर अंग्रेजों की कूटनीति के कारण अलगाववाद का बीज भी अंकुरित होने लगा था। 1906 ई. में मुस्लिम लीग की स्थापना से अलगाववाद का पौधा लग गया। लेकिन राष्ट्र को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्ति दिलाने वाले सपूतों ने अपना कार्य शुरू कर दिया था। बंग भंग को लेकर आंदोलन उग्र होता जा रहा था जिस वर्ष अंग्रेज़ों ने कलकत्ता से बदल कर दिल्ली को भारत की राजधानी बनाया, उसी वर्ष यानी सन् 1911 ई. में बंग-भंग को रद्द भी किया गया। जनता के रोष का परिणाम सामने आने लगा था। सन् 1914 ई. में गाँधी जी का भारत में आगमन होता है। इसके पहले वे दक्षिण अफ्रीका में सरकार के अमानुषिक अत्याचार के खिलाफ सफल आंदोलन चला चुके थे। यहाँ की राजनीति में गांधी के प्रवेश से एक नए दौर की शुरूआत हुई। 1916 ई. में गाँधी और मदनमोहन मालवीय द्वारा आंदोलन शुरू किया गया जिसमें मजदूरों को देश से बाहर भेजने का कड़ा विरोध था। 1917 ई. में बाध्य होकर सरकार ने इस प्रथा पर रोक लगा दी। 1916 ई. में खिलाफत आंदोलन शुरू हुआ। इस आंदोलन से यह साफ जाहिर हो गया कि एक ओर कांग्रेस है तो दूसरी ओर मुस्लिम लीग। गांधी कांग्रेस के नेता बने तो जिन्ना मुस्लिम लीग का। 1914-1918 ई. के बीच प्रथम विश्व युद्ध के दौरान गांधी और तिलक ने अंग्रेज़ों का साथ दिया। किंतु परिणाम उल्टा निकाला। देश में अंग्रेज़ों का जुल्म और बढ़ता गया। 1915 ई. में श्रीमती एनी बेसेन्ट ने भारतीय राजनीति में कदम रखा। 1915 ई. में ही दो बड़े नेताओं, गोपाल कृष्ण गोखले और फीरोजशाह मेहता की मृत्यु हो गई। तिलक जनजागरण का कार्य कर रहे थे। अंग्रेज़ों को डर था कि तिलक की लोकप्रियता कहीं उनकी सरकार को न डगमगा दे। इस कारण कई झूठे आरोप लगाकर उन्हें जेल भेज दिया गया। 1914 ई. में उन्हें मॉडले जेल से छोड़ा गया। 1915-16 ई. में उन्होंने राष्ट्रीय दल का संगठन किया। आयरलैण्ड से प्रेरणा पाकर 1916 ई. में पूना में उन्होंने होमरूल लीग की स्थापना की। इस लीग की स्थापना से देश के नवयुवकों में स्वराज्य प्राप्ति की चेतना का विकास हुआ। राष्ट्रीय साहित्य की रचना की जाने लगी। तिलक के स्वास्थ्य खराब होने पर इस होमरूल लीग को ऐनी बेसेन्ट ने सफलतापूर्वक चलाया। इस होमरूल लीग के प्रयत्न से ही भाषा के आधार पर प्रान्तों का पुनर्निर्माण तथा राष्ट्रीय तिरंगा झंडा का स्वरूप सामने आया।

सरकार की मंदपूर्ण नीतियों से एक ओर जनता में रोष बढ़ता जा रहा था वहीं गरम और नरम दल में दूरी भी होती जा रही थी। 1919 ई. का वर्ष राजनीतिक घटनाओं से भरपूर रहा। गांधी जी ने रौलट एक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह शुरू कर दिया। सारे देश में सरकार के विरुद्ध आंदोलन शुरू हो गया। पंजाब के गवर्नर माईकल ओ. डायर ने जलियाँवाला बाग में हो रही शांत सभा पर गोलियाँ चलवा कर नरसंहार किया। सारा देश इस नर संहार से क्षुब्ध हो उठा। 1919 में ही नयी कौंसिलों के चुनाव के विरुद्ध असहयोग आंदोलन शुरू हुआ। अगस्त 1920 ई. में गरम दल के नेता लोकमान्य तिलक का निधन हो गया। सारा देश इस महान सपूत के खोने पर शोक मग्न हो गया।

इस प्रकार 1900 से 1920 ई. के बीच जितनी भी राजनीतिक घटनाएँ घटीं उसका प्रभाव तत्कालीन साहित्य पर पड़ा। गांधी जी के सत्य, अहिंसा, मानवता, बन्धुत्व और राष्ट्रीयता का स्थायी प्रभाव हम तत्कालीन साहित्य पर स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। श्रीधर पाठक, नाथूराम शर्मा 'शंकर', महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त तथा गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' आदि साहित्यकारों की रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना स्पष्ट दिखाई पड़ती है।

3.2.2 सामाजिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि

द्विवेदी युग में सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में बहुत बड़ा परिवर्तन आ रहा था। यह परिवर्तन तत्कालीन समाज सुधार आंदोलनों द्वारा उपस्थित हुआ था। पश्चिम के साथ संपर्क होने पर किसी भी बात को वैज्ञानिक दृष्टि से परखने की शक्ति का विकास हुआ। पश्चिम में विकसित भाईचारे एवं समानता के भाव ने यहाँ के प्रबुद्ध वर्ग को प्रभावित किया था। राजा राममोहन राय, केशवचंद्र सेन, भारतेंदु, दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, ऐनी बेसैंट और रानाडे जैसे समाज सुधारक नेताओं ने सामाजिक एवं धार्मिक पुनरुद्धार के लिए महत्वपूर्ण कार्य किए। ब्रह्म समाज, आर्य समाज, वेदांत दर्शन, तदीय समाज, गाँधीवादी विचारधारा, प्रार्थना समाज, राम कृष्ण मिशन, थियोसाफिकल सोसाइटी आदि द्वारा सबने अपने-अपने तरीकों से सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया। दादा भाई नौरोजी, गोखले, तिलक एक तरफ राजनीतिज्ञ थे तो दूसरी तरफ समाज सुधारक। यद्यपि द्विवेदी युग के आरंभ के समय दयानन्द, रामकृष्ण, विवेकानंद आदि का देहांत हो चुका था, कई अमानुषिक प्रथाएँ भी ढीली पड़ गई थीं, किंतु छुआछूत, बाल विवाह, विधवा-विवाह निषेध, स्त्री शिक्षा का अभाव, पर्दा-प्रथा, वर्ण-भेद, अंध-विश्वास समुद्र-यात्रा, शिक्षा का प्रसार आदि द्वारा सामाजिक रूढ़ियाँ भी टूटने लगीं। तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलन ने सामाजिक कुरीतियों को प्रभावित किया। राष्ट्र को स्वतंत्र कराने की भावना ने लोगों को जाति, धर्म, वंश से ऊपर उठने के लिए प्रेरित किया। हिंदू-मुस्लिम एकता, हरिजनोद्धार आदि के लिए नेताओं ने कई कार्य किए। आर्य समाज द्वारा चलाए गए शुद्धि आंदोलन ने जहाँ हिंदुओं की बिखरी हुई जातियों को एकजुट होने के लिए प्रेरणा दी, वहीं हिंदू मुस्लिमों को एकजुट करने के लिए कई कार्यक्रम बनाए गए। तर्क बुद्धि, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, नवीन शिक्षा और आविष्कारों से लोगों को एक नई राह पर चलने की प्रेरणा मिली। वैज्ञानिक आविष्कारों ने लोगों के बीच की दूरी को कम किया।

इस युग में पौराणिक धर्म की प्रमुखता के कारण बहुदेववाद, यात्रा, व्रत, कर्म-काण्ड, मूर्तिपूजा और त्योहारों का बोलबाला था। आर्य समाज द्वारा इन भेदों को दूर करने का प्रयत्न किया गया। एकेश्वरवाद का प्रचार करके आर्य समाज ने लोगों को एकसूत्र में बाँधने का प्रयत्न किया। धार्मिक संस्कारों को तत्कालीन नेताओं ने नया रूप दिया। गीता

के मानव धर्म का सन्देश फैलाया गया। लोकमान्य तिलक, एनी बेसेंट तथा महात्मा गाँधी ने गीता की अपने-अपने ढंग से व्याख्या की। उन्होंने समाज को मानव मात्र से प्रेम करने का संदेश दिया। इस प्रकार समग्र रूप से द्विवेदी युग सामाजिक एवं धार्मिक सुधारवाद का युग था।

3.2.3 साहित्यिक पृष्ठभूमि

भारतेंदु के अवसान के बाद हिंदी की उन्नति में शिथिलता आ गई थी। अनुवाद और अनुकरण की प्रवृत्ति भी बढ़ रही थी। साहित्यिक गतिविधियों को नियंत्रित करने वाला कोई नेता नहीं था। साहित्य में एक प्रकार से अराजकता उच्छृंखलता और पथ-भ्रष्टता का वातावरण बन गया था। एक ओर तो तिलक आदि राष्ट्रीय विचारधारा को फैला रहे थे तो दूसरी ओर हिंदी जगत में अनिश्चितता का वातावरण भी बना हुआ था। राष्ट्रीयता को वाणी देने के लिए एक सशक्त भाषा की आवश्यकता थी। अंग्रेज भाषा-भेद नीति को बनाए रखकर अपना कार्य सिद्ध करना चाहते थे। किंतु हिंदी प्रेमियों द्वारा हिंदी की उन्नति के प्रयास जारी थे।

पं. मदनमोहन मालवीय, श्यामसुंदर दास, महावीर प्रसाद द्विवेदी और बालमुकन्द गुप्त के प्रयत्न से लेफ्टिनेन्ट गवर्नर एटनी मेकडॉनल्ड ने अदालत में हिंदी भाषा और नागरी लिपि के व्यवहार के लिए आज्ञा पत्र निकाला। राजनीतिक आंदोलनों और वैज्ञानिक आविष्कारों तथा ईसाई मिशनरियों के प्रयत्न से हिंदी के विकास में सहायता पहुँची। किंतु जैसा कि ऊपर हमने चर्चा की है कि हिंदी भाषा में अनुकरण की प्रवृत्ति बढ़ी थी। भाषा अनगढ़ थी। कविता अपरिनिष्ठित, एवं काव्योचित गुणों से विहीन हो रही थी। व्यवस्थित भाषा के अभाव के कारण हिंदी साहित्य का स्तर गिरता जा रहा था। ऐसे समय में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भाषा संस्कार शुरू किया। उस समय खड़ी बोली में रचना करने वाले अलग-अलग रचना सिद्धांत रखते थे। अंग्रेजी, बंगला, संस्कृत आदि के काव्य के अनुसार कई शैलियां चल पड़ी थीं। द्विवेदी जी ने काव्य रचना के क्षेत्र में काव्य भाषा को परिमार्जित एवं स्थिर रूप देने के लिए कार्य किया। एक समर्थ आलोचक की भाँति उन्होंने विभिन्न रचनाकारों की रचना को सुधारा। भाषा को सजाने सँवारने का कार्य उन्होंने सरस्वती पत्रिका के माध्यम से किया। गद्य और पद्य की एक भाषा के लिए द्विवेदी जी ने अथक परिश्रम किया। उनकी लगन से ही खड़ी बोली, का परिमार्जित रूप उभर कर सामने आया और पद्य तथा गद्य की भिन्न भाषा का झगड़ा दूर हो गया। मुख्य रूप से उन्होंने भाषा को प्रसाद गुण से युक्त, व्याकरण संबंधी अशुद्धियों से दूर, अभिव्यंजना शक्ति से पूर्ण बनाने का प्रयत्न किया। रचनाकारों को उन्होंने शब्दाडम्बर से बचने और अश्लील और ग्राम्य शब्द प्रयोग से बचने का सुझाव किया। उन्होंने लेखकों को देशज शब्द के प्रयोग के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार एक कठोर शासक के समान उन्होंने भाषा के क्षेत्र में लेखकों को नियंत्रित किया। उन्होंने भारतेंदु काल की त्रुटियों को दूर करके साहित्य को एक अनुशासित रूप प्रदान किया। पत्रिकाओं द्वारा नवीन विचारधारा का प्रचार जोरों से हुआ। तत्कालीन पत्रिकाओं में 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका', 'सरस्वती', 'इन्दु', 'मर्यादा', 'प्रताप, 'अभ्युदय', 'प्रभा', 'भारतमित्र', 'सैनिक', 'अर्जुन', 'तथा', 'आज' में राष्ट्रीय चेतना फैली। इस प्रकार द्विवेदी युगीन साहित्य एक नई दिशा की ओर अग्रसर हुआ।

बोध प्रश्न

1) क) 1885 ई. में भारतीयों को किस संगठन के द्वारा सरकार से संघर्ष का मंच मिला?

....

ख) लोकमान्य तिलक ने किन-किन उत्सवों द्वारा जन जागरण का कार्य किया ?

....

ग) मराठा और केसरी पत्रिकाएँ किसके द्वारा निकाली गईं?

....

2) क) किन नेताओं के प्रयत्न से हिंदी को अदालती कार्यवाही के लिए स्वीकारा गया?

....

ख) महावीर प्रसाद द्विवेदी ने किस पत्रिका के माध्यम से हिंदी की सेवा की?

....

ग) द्विवेदी युग में प्रकाशित होने वाली चार पत्रिकाओं के नाम लिखिए।

1) .... 2) .... 3) .... 4) ....

3) द्विवेदी जी ने भाषा को सजाने सँवारने के लिए किस तरह का योगदान दिया? लगभग पाँच पंक्तियों में उत्तर लिखें।

....

....

....

अभ्यास

1) द्विवेदी युगीन पृष्ठभूमि पर लगभग 12 पंक्तियों में लिखिए।

....

....

3.3 युगीन साहित्यकार

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की। हिंदी की उन्नति के लिए किए गए उनके कार्य से साहित्य का विकास-विस्तार हुआ। विभिन्न गद्य विधाओं में रचनाएँ होने लगीं। काव्य रचना के लिए विषय वस्तु का विस्तार हुआ। भारतेंदु 35 वर्ष की अल्पायु में ही हिंदी भाषा साहित्य के लिए इतना कुछ कर गए जिससे उन्हें युग निर्माता की संज्ञा दी गई। किंतु उनके निधन के बाद कोई ऐसा नेता न रहा जो भाषा साहित्य को दिशा निर्देश दे सके। उच्छृंखलता एवं अराजकता के वातावरण में महावीर प्रसाद द्विवेदी के आगमन से यह कमी दूर हुई। सन् 1903 में प्रकाशित 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से ही द्विवेदी जी ने हिंदी भाषा-साहित्य को इस अराजकता के घेरे से बाहर

निकाला। सरस्वती में लेख एवं टिप्पणियाँ लिखकर उन्होंने लगातार हिंदी भाषा साहित्य की उन्नति के लिए कार्य किया। अंग्रेजों के द्वारा अपनाई गई भाषा संबंधी भेद नीति को वे अच्छी प्रकार समझते थे। उर्दू-हिंदी के झगड़े को जड़ से दूर करने के उद्देश्य से वे बराबर लिखते रहे। 'देश व्यापक भाषा' लेख जो सितम्बर-अक्टूबर 1903 ई. की सरस्वती पत्रिका में छपा था उसका कुछ अंश यहाँ दिया जा रहा है जिससे आपको अनुमान लग जाएगा कि तत्कालीन समय में उन्होंने हिंदी भाषा साहित्य के लिए कितना महत्वपूर्ण कार्य किया।

'संयुक्त प्रांत, मध्य प्रदेश, मध्य भारत, राजपूताना और बिहार की भाषा हिंदी है। पंजाब में जो भाषा बोली जाती है यह भी हिंदी ही है, क्योंकि उर्दू कोई भिन्न भाषा नहीं। वह हिंदी की ही एक शाखा है। हिंदी का और उर्दू का व्याकरण एक ही है। फारसी और अरबी के शब्दों की प्रचुरता होने से उर्दू उन लोगों की समझ में अच्छी तरह नहीं आ सकती जिनको इन दो भाषाओं के शब्दों का थोड़ा ज्ञान नहीं है। उर्दू की यदि यह कठिनता निकाल दी जावे तो उसमें और बोलचाल की साधारण हिंदी में कुछ भी अंतर न रहे। इसलिए उर्दू को हिंदी ही समझना चाहिए।'

इस प्रकार उर्दू की कठिनता को समाप्त कर वे जनता के निकट की बोलचाल की भाषा को बढ़ावा देना चाहते थे। इसी प्रकार के विभिन्न लेखों के माध्यम से उन्होंने हिंदी भाषा साहित्य को एक सुदृढ़ परिमार्जित रूप देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आइए इस युग के साहित्यकारों एवं उनके रचनाकारों को जानें :

3.3.1 गद्य साहित्यकार

द्विवेदी युग में महत्वपूर्ण गद्य रचनाकार हुए और उन्होंने महत्वपूर्ण गद्य रचनाएँ कीं। विशेष रूप से उपन्यास-कहानी, निबंध आलोचना, आदि गद्य विधाओं का विकास इसी युग में हुआ। इन विधाओं का अपना स्वतंत्र रूप बना। बाद में इन विधाओं के इन्हीं स्वतंत्र विधाओं की नींव पर महान् साहित्यकारों का निर्माण हुआ। नाटक के क्षेत्र में जयशंकर प्रसाद, उपन्यास कहानी के क्षेत्र में प्रेमचंद, निबंध के क्षेत्र में बालमुकुंद गुप्त, पूर्ण सिंह, रामचंद्र शुक्ल तथा आलोचना के क्षेत्र में रामचंद्र शुक्ल जैसे महान साहित्यकार इसी युग में हुए। इन विधाओं के अलावा आत्मकथा, जीवनी संस्मरण, यात्रा विवरण, रेखाचित्र आदि नवीन विधाओं का सूत्रपात भी इसी युग में हुआ।

नाटक

आप यह जान चुके हैं कि हिंदी में नाटकों की शुरूआत भारतेंदु ने की। उनके प्रयास से इस विधा का विकास हुआ। उस युग के सभी लेखकों को भारतेंदु से प्रेरणा मिली थी, और सभी ने भिन्न प्रकार के नाटकों की रचना की थी। उस समय नाटक लिखे भी जाते थे और उनका मंचन भी होता था। यही कारण है कि उस समय इस विधा का विकास हुआ किंतु द्विवेदी युग तक आते आते इस विधा का विकास रुक सा गया। यद्यपि इस युग में भी नाटकों की रचना हुई लेकिन उस गति से नहीं जिस गति से भारतेंदु युग में हुई थी। द्विवेदी युग में बांगला, संस्कृत, अंग्रेजी आदि भाषाओं में रचित नाटकों का अनुवाद हुआ। संस्कृत के नाटकों में भवभूति, कालिदास आदि के नाटकों के अनुवाद हुए जो बहुत लोकप्रिय हुए। बांगला के जिन लेखकों के नाटक अनूदित हुए उनमें द्विजेन्द्र लाल राय, रवीन्द्र नाथ ठाकुर, क्षीरोदप्रसाद, गिरीश बाबू तथा विनोद विधा प्रमुख हैं। अंग्रेजी के महान् नाटककार शेक्सपीयर के नाटकों (मैकबेथ, रोमियो-जूलियट, हैमलेट) के अनुवाद हुए। इस युग में मौलिक नाटकों की रचना भी हुई। पं. किशोरीलाल गोस्वामी

ने 'चौपट चपेट' तथा 'मयंकमंजरी' नाटकों की रचना की। पं. ज्वाला प्रसाद मिश्र ने 'सीताबनवास', 'अयोध्या सिंह' उपाध्याय 'हरिऔध' ने 'रुक्मिणी', बाबू शिवनंदन सहाय ने 'सुदामा' नाटक की रचना की। ये मौलिक नाटक अत्यंत साधारण स्तर के थे। इस युग में पारसी थियेटरों का खूब विकास हुआ किंतु उनका स्तर काफी गिरा हुआ था। भोंडेपन के कारण इनका कोई साहित्यिक मूल्य नहीं है। नाटक विधा में उन्नति उस समय हुई जब जयशंकर प्रसाद ने इस विधा में लेखन किया। उन्होंने उत्कृष्ट साहित्यिक नाटकों की रचना की।

उपन्यास

गद्य विधाओं में जिस विधा को सबसे अधिक लोकप्रियता मिली वह है उपन्यास। आधुनिक युग में इसे महाकाव्य की संज्ञा भी दी गई। जीवन के विभिन्न पक्षों को इस विधा के माध्यम से उजागर किया गया। इस विधा में मानव जीवन के बाहरी पक्ष के अलावा भीतरी पक्ष अर्थात् मनोभावों को भी विशद रूप से वर्णित किया जा सकता है। इन्हीं गुणों के कारण यह विधा जनसाधारण में बहुत लोकप्रिय हुई। इससे पहले की इकाई में आपने अध्ययन किया है कि किस प्रकार हिंदी गद्य की शुरूआत के साथ-साथ इस विधा की भी शुरूआत हुई। भारतेंदु युग के उपन्यासकारों एवं उनकी रचनाओं को भी आप जान चुके हैं। यद्यपि उस युग के उपन्यासकारों का मुख्य उद्देश्य शुद्ध मनोरंजन था किंतु 'परीक्षा गुरु' जैसे सामाजिक समस्याओं से युक्त उपन्यास की भी शुरुआत हो गई थी।

द्विवेदी युग में बहुत से ऐसे भी उपन्यासकारों ने औपन्यासिक रचना की जो भारतेंदु युग से ही लिख रहे थे। ऐसे उपन्यासकारों में किशोरी लाल गोस्वामी का प्रमुख नाम है। इन्होंने लगभग पैंसठ छोटे-बड़े उपन्यासों की रचना की। ये 'उपन्यास' नाम का मासिक पत्र भी निकाला करते थे। इनके कुछ उपन्यासों के नाम हैं : तारा, तरुण, तपस्विनी, चपला, लीलावती, रजिया बेगम, लवंगलता आदि। द्विवेदी युग में ही 'ठेठ हिंदी का ठाठ' तथा 'अधखिला फूल' उपन्यासों की रचना हुई। क्रमशः इसके रचयिता थे पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' तथा लज्जा राम मेहता। अन्य नाटककार हैं बाबू ब्रजनंदन सहाय तथा राधा कांत। उपन्यास के क्षेत्र में इसी युग में प्रेमचंद जैसे व्यक्तित्व का पदार्पण होता है। इन्होंने हिंदी उपन्यासों की रचना कर साहित्य के अमूल्य भंडार में सामग्री भेंट की। पहले उर्दू में लिखते थे किंतु उर्दू में लिखे उपन्यासों का हिंदी संस्करण द्विवेदी युग में ही प्रकाशित होने लगा। 'प्रेमा' और 'वरदान' उनके ऐसे ही उपन्यास थे। प्रेमचंद का पहला महत्वपूर्ण सामाजिक उपन्यास 'सेवासदन' सन् 1915 ई. में प्रकाशित हुआ। इस युग में अन्य भाषाओं में रचित उपन्यासों का अनुवाद भी हुआ। विशेष रूप से बांगला के उपन्यासकारों के उपन्यास बहुत लोकप्रिय हुए। जिन बांग्ला के उपन्याकारों के उपन्यास का अनुवाद हुआ उनमें बंकिमचंद्र, रमेशचंद्र दत्त, शरतचंद्र, हाराणचंद्र रक्षित, तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर प्रमुख हैं।

कहानी

कहानी विधा की विकसित परंपरा संस्कृत की रचनाओं में मिलती है किंतु हिंदी में कहानी की शुरूआत भारतेंदु युग से ही हुई। पिछली इकाई में आपने पढ़ा है कि राजा शिव प्रसाद आदि ने कहानियों की रचना की थी। किंतु आधुनिक तत्वों से युक्त कहानियों की रचना 1900 ई. के बाद ही हुई। यद्यपि प्रेमचंद 1900 ई. के आसपास से ही कहानी की रचना कर रहे थे किंतु उनकी कहानियाँ 1914-15 के आसपास ही प्रकाशित हुईं। इससे पहले जयशंकर प्रसाद की 'ग्राम' कहानी 1911 में प्रकाशित हो चुकी थी। लेकिन हिंदी की पहली और श्रेष्ठ कहानी का प्रकाशन 1915 में ही हुआ। कहानी थी 'उसने कहा था' और

इसके लेखक थे चंद्रधर शर्मा गुलेरी। इस युग में कई महत्वपूर्ण कहानीकार हुए, इनमें विश्वंभर नाथ शर्मा 'कौशिक', सुदर्शन, राधिकारमण सिंह, जी.पी. श्रीवास्तव, चतुरसेन शास्त्री के नाम प्रमुख हैं। प्रेमचंद ने उपन्यास विधा में जिस प्रकार की उत्कृष्ट रचनाओं की रचना की उसी प्रकार कहानी के क्षेत्र में भी उन्होंने महत्वपूर्ण योगदान दिया। 1915 में उनकी पहली कहानी प्रकाशित हुई। इस कहानी का नाम था 'पंच परमेश्वर'। इस कहानी के माध्यम से उन्होंने मानव मन के अंदर छिपे हुए देवत्व को उजागर करने का प्रयास किया है। सामाजिक समस्याओं, मानवीय भावनाओं एवं आदर्श की स्थापना से युक्त कहानियों की रचना करके उन्होंने हिंदी साहित्य को अमूल्य खजाने से भर दिया।

जयशंकर प्रसाद भी द्विवेदी युग से कहानियों की रचना कर रहे थे। उनकी कहानियों में भावात्मक संघर्ष और मनोवैज्ञानिक अंतर्द्वन्द्व का अधिक चित्रण मिलता है। ऐसा उनके कविमन के कारण हुआ। आकाशदीप, पुरस्कार, इंद्रजाल, छाया आदि उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। राधिकारमण की कहानी 'कानों में कंगना' तथा सुदर्शन की 'एक लोटा पानी' इस युग की प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

निबंध

निबंध विधा का विकास भी भारतेंदु युग में हो चुका था। इस युग के निबंधकारों ने निबंधों के माध्यम से जहाँ सामाजिक चेतना फैलाई वहीं राष्ट्रीय भावना को बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। व्यंग्य एवं विनोद से पूर्ण रचनाएँ भी हुईं। द्विवेदी युग में निबंध विधा का और विकास हुआ। ''सरस्वती'' पत्रिका के माध्यम से उन्होंने इस विधा में लेखन के लिए लेखकों को प्रोत्साहित किया। द्विवेदी जी ने ऐतिहासिक ज्ञान-विषयक, पुरातत्व तथा समीक्षा संबंधी अनेकों उपयोगी निबंधों की रचना की। निबंध के क्षेत्र में उनका एक महत्वपूर्ण कार्य था अंग्रेजी के निबंधकार 'बेकन' के निबंधों का अनुवाद। इस अनुवाद को उन्होंने 'बेकन विचार रत्नावली' के नाम से प्रकाशित किया था। इसके द्वारा तत्कालीन अन्य लेखकों को भी निबंध लिखने की प्रेरणा मिली।

इस युग में कई पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से इस विधा का विकास हुआ। 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका'' (1897) 'समालोचक' (1902), 'इन्दु' (1909) 'मर्यादा' (1910) प्रभा (1913) में विभिन्न विषयों से संबंधित निबंध छपा करते थे। बालमुकुंद गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्यामसुंदर दास, रामचंद्र शुक्ल, सरदार पूर्ण सिंह, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, माधव प्रसाद मिश्र आदि ने महत्वपूर्ण निबंधों की रचना की है। इन्होंने सामाजिक और नैतिक विषयों से पूर्ण निबंधों की रचना की। इनके कुछ महत्वपूर्ण निबंधों के नाम इस प्रकार हैं- 'आचरण की सभ्यता', 'सच्ची वीरता', 'मजदूरी और प्रेम'।

बालमुकुंद गुप्त ने समसामयिक राजनीति को निबंध के विषय के रूप में चुना। व्यंग्यात्मक भाषा और तीव्र राष्ट्रीय भावना इनके निबंधों की विशेषता है। 'शिवशंभु का चिट्ठा' इनका महत्वपूर्ण निबंध है।

चंद्रधर शर्मा गुलेरी द्विवेदी युग के अन्य महत्वपूर्ण निबंधकार हैं। इन्होंने गवेषणापूर्ण गंभीर विषय को लेकर सरल सहज शैली में निबंधों की रचना की। मार्मिकता और व्यंग्य इनके निबंधों की विशेषता है।

रामचंद्र शुक्ल ने भी इसी युग में निबंधों की रचना की। उनके प्रारंभिक निबंधों में भी वे विशेषताएँ मिल जाएँगी जिसे उन्होंने बाद के निबंधों में विकसित रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने विविध विषयों पर निबंध रचना की। गंभीरता, विवेचन एवं तीखा व्यंग्य उनके निबंधों की विशेषता है।

3.3.2 पद्य साहित्यकार

लगभग बीस वर्ष की अवधि (1900 से 1920) को द्विवेदी युग माना जाता है। इस अवधि में बहुत से कवि ऐसे हैं जो 1900 ई. से पहले से भी रचना कर रहे थे, और 1920 ई. के बाद काफी दिनों तक काव्य रचना करते रहे। इसलिए अवधि की सीमा के अन्तर्गत हम रचनाओं को बाँध नहीं सकते। यही कारण है कि जब किसी युग विशेष के संदर्भ में कवि का उल्लेख करते हैं तो इसका तात्पर्य हुआ कि उस कवि की रचना की प्रवृत्ति उस काल में विशेष में क्या रही। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर हम द्विवेदी युग के रचनाकारों का अध्ययन करेंगे।

1) मैथिलीशरण गुप्त

मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के सबसे महत्वपूर्ण कवि हैं। द्विवेदी जी की प्रेरणा से ही वे काव्य रचना में प्रवृत्त हुए। उनकी प्रथम कविता 'हेमन्त' 1905 में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई। इन्होंने कुल 40 मौलिक, 6 अनूदित ग्रंथों की रचना की तथा कुछ फुटकर रचनाएँ भी कीं। पौराणिक कथाओं से विषय लेकर उन्होंने काव्य रचनाएँ कीं। विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने 'काव्येर उपेक्षिता' नाम से एक लेख लिखा था। इस लेख में उन्होंने उन नारी चरित्रों का उल्लेख किया था जिन पर बहुत कम लिखा गया था। गुप्त जी ने वह लेख पढ़ा और उन्हें प्रेरणा मिली। 'उर्मिला', 'कैकेयी', 'यशोधरा', 'विष्णुप्रिया', 'हिडिंबा' आदि पौराणिक महिला पात्रों को उन्होंने काव्य रचना के लिए चुना। नारी की गौरव गाथा का गान कर उन्होंने पुरुषशासित समाज में उन्हें उचित एवं समान अधिकार दिलाने का प्रयास किया। महाभारत और रामायण की कथाओं के माध्यम से उन्होंने राष्ट्रीय चेतना को वाणी दी। तत्कालीन भारत में स्वतंत्रता आंदोलन की तैयारी चल रही थी। राजनेता इस प्रयास में लगे हुए थे। कवियों ने काव्य रचना द्वारा इसमें अपना सहयोग दिया। ''भारत भारती'' की रचना कर गुप्त जी ने देशवासियों को आत्मोद्धार के लिए प्रेरित किया। पश्चिम की विचारधारा का प्रभाव भारत पर पड़ रहा था। भाईचारे और मानवतावादी भावना का प्रवेश काव्य में भी हुआ। अपने 'साकेत' महाकाव्य में कवि ने राम को मानव रूप में प्रस्तुत किया। यहाँ राम किसी को स्वर्ग का सुख देने के लिए परलोक की बात नहीं करते बल्कि इस भूतल को ही स्वर्ग बनाना चाहते हैं। इस प्रकार प्रगतिशील विचारधारा के द्वारा कवि ने समाज उत्थान की ही बात कही।

साकेत जैसे प्रबंध काव्य के साथ-साथ विष्णु प्रिया जैसे खंड काव्य की रचना उन्होंने की। उनकी अन्य काव्य रचनाओं में, ग्राम्या, ग्रन्थि, पंचवटी, यशोधरा, जनक, किसान, जयद्रथवध, मंगलघर, विरहिणी ब्रजांगना, वीरांगना, वैतालिक, सिद्धराज, स्वदेश संगीत आदि महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं।

2) पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी

पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी खड़ी बोली कविता के प्रेरणा स्रोत थे। उन्होंने तत्कालीन कवियों को खड़ी बोली में कविता करने के लिए प्रेरित ही नहीं किया बल्कि उसके रूप को स्थिर करने के लिए भगीरथ प्रयास भी किया। यद्यपि वे स्वयं कवि थे, लेकिन कवि से ज्यादा कवि निर्माता थे। गद्य-पद्य की विभिन्न शैलियों के निर्माण के लिए उन्होंने महान प्रयास किया। उनकी आठ अनूदित तथा नौ मौलिक रचनाएँ है अनूदित रचनाएँ इस प्रकार हैं-

1) विनय विनोद-सन् 1899 ई. भर्तृहरि के वैराग्य शतक का दोहों में अनुवाद।

2) विहार वाटिका-1890 ई. संस्कृत वृत्तों में जयदेव के गीत गोविन्द का संक्षिप्त भावानुवाद।

3) स्नेहमाला-1890 ई. भर्तृहरि के श्रृंगार शतक का दोहों में अनुवाद।

4) श्री महिम्न स्रोत-1885 ई. में अनुवाद। इसका प्रकाशन 1890 ई. में हुआ। यह संस्कृत महिम्न स्रोत का संस्कृत वृत्तों में अनुवाद है।

5) गंगा लहरी-सन् 1891, पंडितराज जगन्नाथ की गंगालहरी का सवैया छन्द में अनुवाद।

6) ऋतु-तरंगिणी-सन्1891 ई., कालिदास के ऋतुसंहार की छाया लेकर किया गया षड्ऋतु वर्णन।

7) सोहागरात-(अप्रकाशित) वायरन के ब्राईडल नाइट का छायानुवाद।

8) कुमारसंभव सार-1902, कालिदास के कुमार संभव के प्रथम पाँच सर्गों का पद्यात्मक सारांश।

द्विवेदी जी की मौलिक पद्य रचनाएँ इस प्रकार हैं-

1) देवीस्तुति, कान्यकुब्जावली

2) समाचार पत्र सम्पादक स्तंभ

3) नागरी

4) काव्य मंजूषा

5) काव्यकुन्ज अबला-विलाप

6) सुमन

7) द्विवेदी काव्य माला

8) कविता कलाप

3) अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

हरिऔध जी द्विवेदी युग के दूसरे बड़े कवि हैं। ये कृष्णभक्त थे। इन्होंने ब्रजभाषा में कई कविता-सवैये ग्रंथों की रचना की। ये सुधारवादी आंदोलन से प्रभावित थे। उनकी रचनाएँ हैं-प्रिय प्रवास, प्रेमाम्बु-वारिधि, प्रेम प्रपंच प्रेमाम्बु, प्रयवेक्षण, प्रेमाम्बु प्रवाह। खड़ी बोली में उन्होंने पहली रचना 1900 में की जो 1904 में 'प्रेमपुष्पोहार' नाम से स्वतंत्र ग्रंथ के रूप में प्रकाशित हुई। 'प्रिय प्रवास' उनकी सबसे महत्वपूर्ण रचना है। तत्कालीन सामाजिक आंदोलन का प्रभाव सभी कवियों पर पड़ा था। हरिऔध जी ने इस रचना में उदात्त मानवीय रूपों को प्रस्तुत किया है। परंपरागत नारी वर्णन की अपेक्षा इस रचना में उसे देश सेविका, लोक सेविका, जन्म भूमि, प्रेमिका, आदि रूपों में प्रस्तुत किया गया है।

4) रामनरेश त्रिपाठी

स्वच्छंदतावादी कवियों में रामनरेश त्रिपाठी का नाम प्रथम है। वे ब्रजभाषा से शुरू करने के बाद खड़ी बोली में कविता करने लगे। खड़ी बोली में उनकी प्रथम रचना 'जन्म भूमि भारत' है। तत्कालीन परिस्थिति के अनुकूल इस कविता में देश के प्रति भक्ति भावना भरी हुई है। 'मिलन' त्रिपाठी जी का प्रथम काव्य ग्रंथ है। इसका प्रकाशन 1917 में हुआ। इस रचना में दाम्पत्य प्रेम, देश प्रेम एवं देश पर बलिदान होने का वर्णन है। 'पथिक' उनका दूसरा काव्य ग्रंथ है। यह 1920 में प्रकाशित हुआ। इस रचना में प्रकृति वर्णन एवं प्रेम भावना का सुन्दर चित्रण हुआ है।

त्रिपाठी जी की फुटकर रचनाएँ हैं- जन्म भूमि भारत, स्वदेश गीत, महापुरुष के लक्षण हिन्दुओं की हीनता। द्विवेदी युगीन काव्य कला का दर्शन हम उनकी 'लोभ से हानि' 'बाइसिकिल', 'शरद तरंगिनी', 'पुस्तक प्रार्थना' आदि फुटकर रचनाओं में देख सकते हैं।

5) पं. माखन लाल चतुर्वेदी

पं. माखन लाल चतुर्वेदी, द्विवेदी युग के मुख्य कवियों में से एक हैं। 1908 ई. से ही ये काव्य रचना करते रहे। खड़ी बोली की उनकी पहली रचना है, 'हे प्रशान्त! तथा 'तूफान हिये में कैसे कहूँ समा जा'। तत्कालीन पत्रिकाओं, प्रभा, मर्यादा, प्रताप सरस्वती, कर्मवीर में उनकी रचनाएँ छपती थीं। 'चेतावनी', 'पत्नी' तथा 'हिम तरंगिनी' की अधिकांश रचनाएँ उन्होंने 1913 ई. से 1920 ई के बीच की।

6) सियारामशरण गुप्त

सियाराम शरण गुप्त पर गाँधीवादी विचारधारा का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। यद्यपि वे मुख्य रूप से गद्यकार हैं, किंतु उन्होंने कुछ काव्य रचनाएँ कीं जिनमें उनका हृदय पक्ष प्रकट हुआ है। 'उन्मुक्त' तथा 'मौर्य विजय' उनका प्रसिद्ध खंड काव्य है। मौर्य विजय में जहाँ उन्होंने ऐतिहासिक विषय को चुना वहीं उन्मुक्त में प्रथम विश्व युद्ध में हुए नरसंहार पर लिखा। उन्होंने रवींद्रनाथ की कुछ कविताओं का अनुवाद भी किया जिनमें कर्तव्य (1914 ई.) तथा भारत लक्ष्मी मुख्य हैं। वीर बालक (1913 ई.), अनाथ (1917 ई.) के अलावा उन्होंने कुछ फुटकर रचनाएँ की थीं जिनमें जननी, 1916 ई., श्री राघव विलाप 1913 ई. तथा तिलक वियोग उल्लेखनीय हैं। विवाह (1990) तथा अविश्वास (1920 ई.) उनकी वीर रस पूर्ण रचनाएँ हैं।

7) गयाप्रसाद शुक्ल सनेही

गयाप्रसाद जी पर तत्कालीन समाजसुधार आंदोलन का बहुत प्रभाव पड़ा था। सामाजिक समस्याओं को उन्होंने अपना काव्य विषय बनाया। उन्होंने उर्दू, शैली के प्रबंधों और छप्पयों में रचनाएँ कीं। 'राष्ट्रीय वाणी' तथा 'त्रिशूल तरंग' उनके गीतों का संकलन है। 'कौशल्या का विलाप' उनकी प्रसिद्ध कृति है। इस रचना में उन्होंने देशवासियों को देश पर गौरव करने की प्रेरणा दी तथा ऐसे लोगों को फटकारा जो अपने देश पर गौरव नहीं करते।

> जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
> वह नर नहीं, नर पशु निरा है और मृतक समान है।'

'कुसुमांजलि', 'प्रेमपचीसी', 'कृषक बन्दन', 'करुणा कादम्बिनी', उनके प्रसिद्ध काव्य संग्रह हैं। उनके काव्य में उचित वैचित्र्य, शब्दों का चमत्कारी प्रयोग, छंद की बँधी हुई गति तथा कल्पना का समावेश स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है।

8) नाथूराम शर्मा 'शंकर'

नाथूराम शर्मा शंकर द्विवेदी युग के ऐसे कवि हैं जिन्हें छुटपन से ही कविता करने का शौक था। उन्होंने विभिन्न छंदों में काव्य रचना की। उस समय समस्यापूर्ति का खूब चलन था और नाथूराम जी समस्यापूर्ति में प्रवीण थे। वे आर्यसमाजी विचारधारा से प्रभावित थे, यही कारण है कि उनके काव्य में तार्किकता और तीखापन मिलता है। नाथूराम जी की प्रकाशित कृतियाँ हैं-

'अनुराग रत्न' (1903 ई.) 'शंकर सरोज' (1904 ई.), 'लोकमान्य तिलक' और 'गर्भरण्डा रहस्य'।

'गर्भरण्डा रहस्य' में उन्होंने विधवाओं की दीनदशा का मार्मिक चित्रण किया है। उनकी रचनाएँ 'सरस्वती, 'मर्यादा', विद्यार्थी'' तथा 'प्रतिभा', पत्रिकाओं में छपती थी। समाज सुधार से संबंधित उनकी रचनाएँ हैं- 'अविद्यानन्द का व्याख्यान', 'पंचपुकार', 'मेरा महत्व', 'आर्य-पंच की आल्हा'। नाथूराम जी ने फुटकर रचनाएँ भी की हैं, इनमें 'शोकाश्रु गीत', 'राजभक्ति', बाल विनोद', 'होली', 'नीति', मुख्य हैं। तार्किकता एवं तीखापन के कारण नाथूराम जी खड़ी बोली के कबीर के रूप में भी प्रसिद्ध हुए।

9) मुकुटधर पाण्डेय

मुकुटधर पाण्डेय द्विवेदी युग के मध्य भाग से काव्य रचना करने वाले कवि हैं। 1911-12 ई. से उन्होंने खड़ी बोली में काव्य रचना शुरू की। उनकी रचनाएँ हैं 'काल की कुटिलता' (1913 ई.) 'जीवन साफल्य', (1912 ई.), 'रत्नाकर' (1913 ई.), 'संकेत सप्तक' (1913 ई.), 'सिंहोपालम्भ' (1913 ई.), 'एक शुभ समय' (1913 ई.), 'कैकेयी का पट्य' (1913 ई.)। ये रचनाएँ 'इन्दु', 'सरस्वती' तथा 'प्रभा' पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थीं। तत्कालीन समय में दलितों के प्रति कवियों की विशेष सहानुभूति थीं। यह समाजसुधार आंदोलन द्वारा संभव हुआ था। 'विश्वबोध' (1917 ई.) मुकुटधर जी की ऐसी ही रचना है जिसमें दलितों एवं दीनों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की गई है। 'रूप का जादू' (1918 ई.), 'क्षमाप्रार्थना' (1918 ई.) 'मर्दित मान' (1918 ई.) तथा 'अंधीरा आँखें' रचनाओं में छायावादी प्रवृत्ति का उन्मेष दिखाई पड़ता है।

द्विवेदी युग के अन्य कवि हैं ठाकुर गोपाल शरण सिंह, श्रीमन्न द्विवेदी, पं. रामचंद्र शुक्ल, पं. कामता प्रसाद गुरू, पं. रामचरित चिंतामणि, पं. गिरिधर शर्मा 'नवरत्न' तथा जगन्नाथ दास रत्नाकर। प्रसाद, पंत, निराला, द्विवेदी युग से ही काव्य रचना करने लगे थे। यहाँ तक कि उनकी कई कृतियाँ प्रकाशित हुईं, किंतु इनकी रचनाओं की विशेषताओं ने ही हिंदी साहित्य में एक नए युग की शुरूआत की और युग परिवर्तन हुआ।

बोध प्रश्न

4) हिंदी और उर्दू के संबंध में द्विवेदी जी का क्या विचार था? लगभग चार-पाँच पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

5) क्या कारण है कि फारसी थियेटरों का विकास होने पर भी उसका साहित्यिक महत्व नहीं? दो-तीन पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

6) निम्नलिखित नाटकों के रचनाकारों का नाम लिखिए-

क) चौपट-चपेट

ख) सीता बनवास

ग) सुदामा

घ) मयंक मंजरी

7) उपन्यास विधा की लोकप्रियता के क्या कारण थे? किस रचनाकार द्वारा हिंदी उपन्यास को उत्कृष्ट रचनाएँ उपलब्ध हुईं?

....

....

....

....

....

8) निम्नलिखित उपन्यासकारों की एक-एक औपन्यासिक कृति का नाम लिखिए-

क) लाला श्रीनिवासदास

ख) किशोरी लाल गोस्वामी

ग) पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

घ) लज्जा राम मेहता

9) हिंदी की पहली और श्रेष्ठ कहानी कौन सी थी? इसके रचयिता कौन थे?

....

....

10) निबंध विधा के विकास के लिए महावीर प्रसाद द्विवेदी ने क्या कार्य किया?

....

....

....

11) मैथिलीशरण गुप्त को साहित्य में उपेक्षित पौराणिक नारी पात्रों पर काव्य रचना की प्रेरणा कहाँ से मिली?

....

....

12) मैथिलीशरण गुप्त रचित पाँच काव्य रचनाओं के नाम लिखिए।

....

....

....

13) महावीर प्रसाद द्विवेदी के दो अनूदित एवं दो मूल काव्य रचनाओं के नाम लिखिए।

....

....

14) अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' की रचना ''प्रिय प्रवास'' की दो तीन विशेषताएँ बताइए।

....

....

15) निम्नलिखित काव्य रचनाओं के लेखकों का नाम लिखिए।

क) मिलन

ख) हे प्रशांत

ग) मौर्य विजय

घ) कृषक क्रंदन

16) द्विवेदी युग के किस कवि को खड़ी बोली का कबीर कहा जाता है?

....

17) नाथूराम शर्मा शंकर ने किस काव्य रचना के माध्यम से विधवाओं की दुर्दशा का चित्रण किया?

....

18) मुकुटधर पाण्डेय की उस रचना का नाम बताइए जिसमें उन्होंने दलितों एवं 'दीनों' के प्रति सहानुभूति प्रकट की है।

....

3.4 द्विवेदी युगीन साहित्यिक प्रवृत्तियाँ

अब तक हमने द्विवेदी युग के गद्य-पद्य के रचनाकारों के बारे में जानकारी प्राप्त की है। हमने देखा कि तत्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव साहित्य पर पड़ा था। रचनाकारों की रचनाओं से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय की सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक समस्याओं को कवियों ने अपना विषय बनाया। युग करवट ले रहा था घिसी-पिटी पुरानी मान्यताएँ अपने आप जर्जरित मकान के समान झर रही थीं। नई मान्यताओं से नए युग के निर्माण की नींव डाली जा रही थी। अब हम द्विवेदी युग की साहित्यिक प्रवृत्तियों की चर्चा करेंगे जिससे आपको यह समझने में कठिनाई न हो कि बदलाव किस रूप में आया।

3.4.1 विषयों की व्यापकता

हम यह अध्ययन कर चुके हैं कि महावीर प्रसाद द्विवेदी के व्यक्तित्व के कारण नए युग की शुरूआत हुई। द्विवेदी जी स्वयं साहित्यकार थे। उन्होंने गद्य और पद्य दोनों में रचनाएँ कीं। किंतु इनके अलावा उनका सबसे बड़ा कार्य था हिंदी भाषा साहित्य को एक

परिमार्जित रूप देने का। इसीलिए वे साहित्यकार से ज्यादा एक महान शिक्षक के रूप में याद किए जाते हैं। तत्कालीन साहित्यकारों को उत्कृष्ट साहित्य रचना के लिए वे सदा प्रेरित करते रहे। साहित्य किस प्रकार देश के उत्थान में योगदान देता है और उसकी क्रांतिकारी भूमिका किस प्रकार की होती है उसके संबंध में द्विवेदी जी ने लिखाः

> 'आँख उठा कर जरा और देशों और जातियों की ओर तो देखिए। आप देखेंगे कि साहित्य ने वहाँ की सामाजिक और राजकीय स्थितियों में कैसे-कैसे परिवर्तन कर डाले हैं, साहित्य ने ही वहाँ समाज की दशा कुछ की कुछ कर दी है, शासन प्रबंध में बड़े-बड़े उथल-पुथल कर डाले हैं, यहाँ तक कि अनुदार धार्मिक भावों को भी जड़ से उखाड़ फेंका है। साहित्य में जो शक्ति छिपी रहती है वह तोप, तलवार और बंब के गोलों में भी नहीं पाई जाती। योरोप में हानिकारिणी धार्मिक रूढ़ियों का उत्पादन साहित्य ही ने किया है, जातीय स्वतंत्रता का बीज उसी ने बोया है, व्यक्तिगत स्वातंत्र्य के भावों को भी उसी ने पाला, पोसा और बढ़ाया है, पतित देशों का पुनरुत्थान भी उसी ने किया है। पाप की प्रभुता को किसने कम किया है? फ्रांस में प्रजा की सत्ता का उत्पादन और उन्नयन किसने किया है, पादाक्रान्त इटली का मस्तक किसने ऊँचा उठाया है? साहित्य ने, साहित्य ने, साहित्य ने।'
>
> (महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण, रामविलास शर्मा, पृ. 273)

इस प्रकार साहित्य को उपयोगी बनाने के लिए उन्होंने पश्चिम में हुई क्रांति का उदाहरण दिया। भारतेंदु युग से ही साहित्य की विषय वस्तु में परिवर्तन शुरू हो गया था। स्वयं भारतेंदु ने विभिन्न विषयों पर लेखन किया और अपने समय के लेखकों को इसी कार्य के लिए प्रेरित किया। द्विवेदी युग में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आदि क्षेत्रों में तेजी से बदलाव आ रहा था। प्रगतिशील विचारों का प्रचार हो रहा था। स्वयं द्विवेदी जी साहित्य में विविध विषयों के पक्षपाती थे। 1901 ई. वाले 'कवि कर्तव्य' लेख में द्विवेदी जी ने कविता के विषय के बारे में लिखा था, यह विचार उस समय के संपूर्ण साहित्य पर भी लागू होता है।

कविता का विषय मनोरंजक और उपदेशजनक होना चाहिए। यमुना के किनारे केलि कौतूहल का अद्भुत वर्णन बहुत हो चुका। न परकीयाओं पर प्रबन्ध लिखने की अब कोई आवश्यकता है, और न स्वकीयाओं के 'गतागत' की पहेली बुझाने की। चींटी से लेकर हाथी पर्यन्त पशु, भिक्षुक से लेकर राजा पर्यन्त मनुष्य, बूंद से लेकर समुद्र पर्यन्त जल, अनन्त आकाश, अनन्त पृथ्वी, अनन्त पर्वत, सभी पर कविता हो सकती है, सभी से उपदेश मिल सकता है और सभी के वर्णन से मनोरंजन हो सकता है। फिर क्या कारण है, कि इन विषयों को छोड़कर स्त्रियों की चेष्टाओं का वर्णन करना ही कोई-कोई कवि कविता की चरम सीमा समझते हैं। यह केवल अविचार और अन्ध परंपरा है।'

उपर्युक्त विचार के अनुसार द्विवेदी जी संसार में व्याप्त सभी चर-अचर विषयों को साहित्य की विषय वस्तु मानते हैं। द्विवेदी युग में साहित्य की विषय-वस्तु का और विस्तार हुआ। मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं पर साहित्य रचा जाने लगा। एक ओर इतिहास से प्रेरणा लेकर उसे आधुनिक संदर्भ में रखा गया तो दूसरी ओर तत्कालीन समस्याओं को विषय वस्तु के रूप में चुना गया। पहले काव्य रचना, गद्य-रचना के लिए विशिष्ट वर्ग का चुनाव होता था। अब जनसाधारण और सर्वसाधारण से संबंधित रचनाएँ होने लगीं। सामान्य से सामान्य व्यक्ति को केन्द्र में रख कर साहित्य की रचना होने लगी। नारी को भोग की वस्तु के घेरे से बाहर निकाला गया। उसे अबला से सबला का रूप दिया गया। द्विवेदी युग में सबसे महत्वपूर्ण बात यह हुई कि अब तक जिन नारी पात्रों को साहित्य

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

में उपेक्षित किया गया था उन पर काव्य रचनाएँ हुईं। यशोधरा, उर्मिला, विष्णुप्रिया, मांडवी, हिडिंबा आदि को एक नए रूप में प्रस्तुत किया गया। पुरुष द्वारा उपेक्षित ये नारी पात्र पुरुष के उत्थान की छिपी शक्ति के रूप में चित्रित किए गए।

साहित्य में अलौकिकता की जगह लौकिकता को स्थान मिला। लौकिकता में भी मानवीयता, आदर्शवाद और यथार्थवाद को ही आश्रय मिला। अब कल्पना को छोड़कर यथार्थ के धरातल पर साहित्य रचना होने लगी। तत्कालीन सभी साहित्यकारों ने, चाहे वे काव्य रच रहे हों या गद्य रच रहे हों, लोकमंगल और लोक रक्षा को ही ध्यान में रखा। साहित्य विशिष्ट वर्ग से हट कर सर्वहारा वर्ग तक पहुँच गया।

3.4.2 राष्ट्रीय जागरण, देश भक्ति, सुधार

इस इकाई में पहले भी आपको बताया जा चुका है कि तत्कालीन भारत पर विदेशी शासन के कारण किस प्रकार की स्थिति बन गई थी। अंग्रेजों की शोषण नीतियों से जनता त्राहि-त्राहि कर रही थी। देश का धन विदेश जा रहा था तो दूसरी ओर यहाँ के कुटीर उद्योग नष्ट हो रहे थे। शासक वर्ग का हर कदम यहाँ की जनता को कुचलने के लिए ही उठता था। दिखावे के रूप में किए गए कार्यों से अप्रत्यक्ष लाभ हुआ। पश्चिम के संपर्क से जनता को पता चल गया कि इस देश में उन्हीं अधिकारों को दबाया जा रहा है जिन्हें वर्षों पहले यूरोप की जनता ने प्राप्त कर लिया था। भारतीय नेताओं से लेकर साहित्यकारों तक और मजदूर से लेकर किसान तक सभी ने जालिम शासन को उखाड़ फेंकने के लिए कमर कस लिया। साहित्यकारों ने राष्ट्रीयता के प्रचार के लिए लेखन शुरू कर दिया। तत्कालीन अंग्रेजी सरकार किसी भी ऐसे कार्य को तुरंत बंद करवा देती थी जिससे लोगों में राष्ट्रीय भावना का विकास हो किंतु द्विवेदी इस प्रकार के दबाव में नहीं आने वाले थे। वे कवियों और लेखकों को भयमुक्त होकर राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत रचना के लिए प्रेरित करते। उनका मत है कि:

''परन्तु परतंत्रता या पुरस्कार प्राप्ति या किसी कारण से सच बात कहने में किसी तरह की रुकावट पैदा हो जाने से यदि उसे अपने मन की बात कहने का साहस नहीं होता तो कविता का रस जरूर कम हो जाता है। इस दशा में अच्छे कवियों की भी कविता नीरस, अतएव प्रभावहीन हो जाती है। सामाजिक और राजनैतिक विषयों में, कटु होने से सच कहना भी जहाँ मना है, वहाँ इन विषयों पर कविता करने वाले कवियों की उक्तियों का प्रभाव क्षीण हुए बिना नहीं रहता।''

यदि राजनीतिक पाबंदी लगी हो तो द्विवेदी जी का विचार है 'नदी, तालाब, वन, पर्वत, फूल, पत्ती, गरमी, सरदी, आदि ही के वर्णन से उसे संतोष करना है' अर्थात झूठ लिखने से न लिखना ही ठीक है।

इस प्रकार अपने लेखों के माध्यम से वे साहित्यकारों को निर्भीक बनाने के कार्य में लगे रहते थे। तत्कालीन सभी कवियों ने राष्ट्रीयता से संबंधी साहित्यिक रचनाएँ कीं। देशभक्ति एवं सुधार के द्वारा वे राष्ट्र को उन्नति की ओर ले जाने का प्रयास करते रहे।

जन्मभूमि के प्रति प्रेम प्रकट करते हुए द्विवेदी जी लिखते हैं:

> जन्मभूमि की बलिहारी है।
> यह सुरपुर से भी प्यारी है।। (द्विवेदी काव्य माला, पृष्ठ 369)

मन्नन द्विवेदी ने लिखा,

ऐसी मातृभूमि मेरी है स्वर्ग लोक से भी न्यारी।
जिसके पद-कमलों पर मेरा तन-मन-धन सब बलिहारी।।

राष्ट्र गायक मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के सर्वश्रेष्ठ कवि थे। परिस्थिति के अनुकूल उन्होंने समय को वाणी दी। मातृभूमि में वे कहते हैं-

जय जय भारत भूमि भवानी।
अमरो ने भी तेरी महिमा बारम्बार बखानी।

(मंगलघट, पृ. 33)

राष्ट्रीयता की भावना का प्रचार हो रहा था। राष्ट्रनेता देश को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त कराना चाहते थे। एक ओर कवियों ने देश को विश्व में श्रेष्ठ माना, दूसरी ओर यह चिंतन करने के लिए भी कहा कि आखिर हम क्यों गुलाम हुए। भारत की श्रेष्ठता के बारे में सियारामशरण गुप्त ने लिखा-

पृथ्वी का श्रेष्ठ सितारा है,
भारत सर्वस्व हमारा है।

1914 ई. में माखन लाल चतुर्वेदी ने लिखा-

क्यों पड़ी परतंत्रता की बेड़ियाँ,
दासता की हाय हथकड़ियाँ पड़ीं।
न्याय के मुँह बंद फाँसी के लिए,
कंठ पर जंजीर की लड़ियाँ पड़ीं।

जागरण और अभियान गीतों द्वारा कवियों ने भारतीय जनमानस को अन्यायी शासक के खिलाफ तैयार किया। नाथूराम शर्मा, बलिदान गान में जागरण के लिए लिखते हैं-

लो स्वराज्य स्वातंत्र्य को दो जीवन बलिदान।
× × ×
देश भक्त वीरों, मरने से नहीं डरना होगा।
प्राणों का बलिदान देश की वेदी पर करना होगा।

(बलिदान गान, पृ. 248)

रूपनारायण पाण्डेय कहते हैं-

'उठो, उठो, क्यों शिथिल पड़े हो? देखो सुदिन सबेरा है',

'न होगी हैट नैकटाई, न कालर और पतलूनें,
हम इंग्लिश कोट को फिर से अंगरखा करके छोड़ेंगे।'

(पराग देश संबंधी प्रोत्साहन, पृ. 20)

मैथिलीशरण गुप्त रचित 'भारत भारती' तो राष्ट्रीय जागरण का मूल आधार ही बन गई थी। इस रचना का जनता में व्यापक प्रचार हो गया था:

सुख और दुःख में एक सा सब भाइयों का भाग हो
अन्तः करण में गूँजता राष्ट्रीयता का राग हो।
हे भाइयो, सोये बहुत अब तो उठो जागो, अहो।
देखो जरा अपनी दशा आलस्य को त्यागो, अहो।

हरिऔध जी ने 'प्रिय प्रवास' के माध्यम से जनजागरण में मंत्र फूँकाः

बूढ़ों, करो बीर, स्वजाति का भला।
अपार दोनों विध लाभ है हमें।

समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करने के लिए साहित्यकारों ने रचनाएँ कीं। उपन्यास, नाटक, कहानी, निबंध एवं लेखों के माध्यम से यह कार्य हुआ। काव्य रचनाओं से लोगों को सही और गलत का ज्ञान भी कराया गया। भारतीय समाज को केन्द्र में रख कर रचनाएँ हुईं। समाज को नई दृष्टि से देखने का यह पहला प्रयास था। आर्य समाज, ब्रह्म समाज, सनातन धर्म, तदीय समाज, रामकृष्ण मिशन, और थियोसोफिकल सोसाइटी द्वारा सामाजिक सुधार के लिए आंदोलन चलाए गए। राष्ट्रीय जन आंदोलन, राजनीतिक उथल-पुथल, मानवतावादी दृष्टिकोण द्वारा सामाजिक काव्य रचना की प्रवृत्ति का प्रसार हुआ। विषयों का नया भंडार मिला यथा विधवा, किसान, अछूत, नारी, दुर्भिक्ष, दलित, बाल और वृद्ध विवाह, मद्यपान, छूआछूत, दम्भ, दहेज, छल-कपट, निर्धनता, आडंबर, अविद्या, धार्मिक और नैतिक पतन, शिक्षा, पर्दा, पुजारी पांडे, तीर्थ, रईसों की विलासिता, हिन्दू-मुस्लिम समस्या आदि। न जाने कितने विषय थे जिन पर साहित्यकारों ने लिखा और सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन की माँग प्रस्तुत की।

बाल-विधवाओं पर श्रीधर पाठक लिखते हैं-

दुखी बाल-विधवाओं की है जो गती।
कौन सके बतला, किसकी इतनी मती।।
दुःख-सुख मरना जीना एक समान है।
जिनके जीते जी दी गयी तिलांजली।

(मनोविनोद, पृ. 76)

आगे वे लिखते हैं-

बाल-विधवा श्रापवश यह भूमिका पातक भई।
होत दुःख अपार सजनी निरखि जग निठुराई।

(मनोविनोद, पृ. 170)

नाथूराम शर्मा ने जाति प्रथा पर करारी चोट की-

जाति पाति के धर्म-जाल में उलझे पड़े गँवार।
मैं इन सबको सुलझा दूँगा, करके एकाकार।

(सरस्वती खण्ड, सं. 05, सन् 1908 ई.)

गुप्त जी ने 'भारत भारती' में समाज के प्रत्येक पक्ष पर लिखा-

हिंदू समाज कुरीतियों का केन्द्र जा सकता कहा।
ध्रुव धर्म पथ में कुप्रथा का जाल सा है बिछा रहा।।

इस प्रकार तत्कालीन कवियों ने समाज को एक नई राह पर लाने के लिए महान कार्य किया।

3.4.3 मानवतावादी दृष्टिकोण

भारतेंदु काल से भारतीय समाज में एक महान परिवर्तन शुरू हो गया था। किसी भी बात को तर्क के आधार पर जाँच करने के बाद मानने की चेतना का विकास होने लगा।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खण्डन मण्डन तर्क-वितर्क और बौद्धिक जागरण के कारण सत्य को ढूँढ़ने की प्रवृत्ति जाग गई। नीर-क्षीर विवेक की प्रवृत्ति ने साहित्य जगत को भी प्रभावित किया। पश्चिमी विज्ञान, आर्य समाज, रवीन्द्र एवं गाँधी की नई वैचारिक क्रांति के फलस्वरूप पौराणिक मान्यताएँ निरर्थक सिद्ध होने लगीं। साहित्य में इस विचारधारा को हम स्पष्ट रूप में देख सकते हैं। राम और कृष्ण अब देवताओं के रूप में नहीं बल्कि मानवीय रूप में चित्रित होने लगे। 'साकेत' और 'प्रिय प्रवास' में राम कृष्ण को मानवीय रूप में ही प्रस्तुत किया गया है। 'पंचवटी' के लक्ष्मण का कथन यह दर्शाता है कि मनुष्यता के द्वारा ही देवत्व की भी उत्पत्ति होती है।

मैं मनुष्यता को सुरत्व की,
जननी भी कह सकता हूँ।

साहित्य में मानवीय भावना किस रूप में स्थान पा रही है उसका प्रमाण मैथिलीशरण गुप्त रचित 'भारत भारती' के इस उदाहरण से स्पष्ट हो जाएगा-

पानी बनाकर रक्त का, कृषि कृषक करते हैं यहाँ
फिर भी अभागे भूख से, दिन रात मरते यहाँ।

द्विवेदी युगीन कवि 'ठाकुर गोपाल शरण सिंह' की निम्नलिखित पंक्तियों में मानवीय भावनाओं को ही जगाया गया हैः

मानव का जीवन ही जग में
मानवता का माप हुआ।
भव्य भावनाओं का आकार
बनकर काव्य कलाप हुआ।

द्विवेदी युग के साहित्य में मानवता को धर्म से भी बड़ा माना गया। ईश्वर सेवा का रूप मानव सेवा और जन सेवा में ही माना गया। किसान, मजदूर, अशिक्षित, आदि काव्य के वर्ण्य विषय बने।

खपाया किये जान मजदूर, पेट भरना पर उनका दूर
उड़ाते माल धनिक भरपूर, मलाई, लड्डू मोतीचूर।

(गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही', मर्यादा, पृ. 49)

'सरस्वती' उस युग की जन चेतना की पत्रिका बन गई थी। लेखों के माध्यम से लेखकों ने जन जागरण का कार्य किया। जून 1914 ई. में 'सरस्वती' में द्विवेदी जी ने 'हमारे गरीब किसान और मजदूर' शीर्षक से एक लेख छापा। लेखक थे जनार्दन भट्ट। इसमें अमीरी-गरीबी के रूप का विश्लेषण किया गया है। वर्ग चेतना का यह प्रथम प्रयास था।

सबके होकर रहो, सहो सबकी व्यथा
दुखिया होकर सुना, सभी की दुःख कथा
परहित में रत रहो, प्यार सबको करो
जिसको देखो दुखी, उसी का दुख हरो।
बसुधा बने कुटुम्ब प्रेमधारा बहे,
मेरा तेरा भेद नहीं जग में रहे।।

इस प्रकार द्विवेदी युगीन साहित्य में जहाँ नए-नए विषयों का समावेश हुआ वहीं पुरानी सड़ी गली मान्यताओं की जगह प्रगतिशील विचारधारा का प्रवेश हुआ। साहित्य रचना कर लेखकों ने समाज एवं राष्ट्र को आगे बढ़ाने का कार्य किया।

बोध प्रश्न

19) काव्य के विषय वस्तु के संबंध में द्विवेदी जी का क्या विचार था? तीन पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

20) द्विवेदी युग के रचनाकारों ने किन-किन विषयों पर रचनाएँ कीं?

....

....

....

21) द्विवेदी युगीन साहित्यकारों ने नारी को किस रूप में प्रस्तुत किया?

....

....

....

22) द्विवेदी युगीन साहित्यकारों ने पौराणिक आख्यानों को किस रूप में प्रस्तुत किया?

....

....

....

23) द्विवेदी युगीन साहित्यकारों के सामने प्रमुख विषय क्या था?

....

....

....

अभ्यास

2) द्विवेदी युगीन साहित्यकारों की मानवतावादी तथा सुधारवादी दृष्टिकोण पर दस पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

....

3.5 द्विवेदी युगीन साहित्य का महत्व

हिंदी साहित्य के उत्थान का संबंध भारत की तत्कालीन बदलती हुई राजनीति से है। भारतेंदु के आगमन से हिंदी गद्य की विविध विधाओं का विकास हुआ। एक ओर राजनीतिक उत्थान-पतन का दौर चल रहा था तो दूसरी ओर साहित्य में निरंतर विकास का रूप भी उभर रहा था। राष्ट्रीयता का विकास उस समय और भी संगठित रूप में हुआ जब अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई। हिंदी का प्रचार राष्ट्रीय विचारधारा का प्रचार बन गया। बड़े-बड़े नेताओं ने हिंदी को अपनाया। पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन बढ़ा। 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन और द्विवेदी जी द्वारा उसके संपादन का भार लेना एक युगान्तकारी घटना थी। भारतेंदु ने हिंदी को अपने पाँव पर खड़ा रहना सिखाया था किंतु जिस माधुर्य एवं सुकुमारता की आवश्यकता थी वह अभी बन नहीं पाई थी। द्विवेदी जी ने हिंदी भाषा, को अनुवाद के द्वारा उत्पन्न अराजकता के वातावरण से बाहर निकाला। जिस समय 'सरस्वती' में छपने के लिए कोई सामग्री पहुँचती द्विवेदी जी उसे ध्यान से देखते और एक-एक शब्द के प्रयोग से संबंधित चेतावनी लिख कर लेखकों को भेजते। इस प्रकार उन्होंने भाषा को परिमार्जित करने का सफल प्रयास किया। खड़ी बोली को समसामयिक संवेदना का वाहक बना कर उन्होंने हिंदी साहित्य को एक नई गति प्रदान की। साहित्य को विषयों की परिसीमा से बाहर निकाला। पौराणिक आख्यानों को समसामयिक संदर्भ में रख कर साहित्य रचना हुई। साहित्य में मानवतावादी दृष्टिकोण का प्रचार हुआ। अब समाज के केवल प्रतिष्ठित और सुख-सुविधा लोभी वर्ग को ही नहीं बल्कि सर्वहारा वर्ग को भी स्थान दिया गया। उस समय के साहित्य की सबसे बड़ी माँग थी राष्ट्रीयता। देश को जालिम विदेशी शासन से मुक्त कराना सबसे बड़ी आवश्यकता थी। रचनाओं के माध्यम से लोगों में राष्ट्रीय भावना को फैलाकर साहित्यकारों ने स्वाधीनता आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उस समय रचनाकारों की रचनाएँ लोगों के लिए प्रेरणा स्रोत बन गईं। अनूदित रचनाओं को एक नया आयाम मिला। इस युग में दो महत्वपूर्ण कार्य हुए, एक साहित्य में विविध विषयों का समावेश तथा दूसरा परिमार्जित भाषा का विकास।

3.6 सारांश

- भारतीय राजनीति में अंग्रेजों के हस्तक्षेप से यहाँ के विभिन्न क्षेत्रों पर प्रतिकूल असर पड़ा। शासन का अधिकार प्राप्त कर लेने पर अंग्रेजों ने इस राष्ट्र का शोषण ही नहीं किया बल्कि यहाँ के लोगों पर अमानुषिक अत्याचार भी किए। जनता इस अत्याचार को कब तक सहन करती। बड़े-बड़े नेताओं एवं प्रबुद्ध व्यक्ति तथा साहित्यकारों ने जालिम सरकार के खिलाफ आवाज़ उठाई। साहित्य के माध्यम से जन जागरण का कार्य हुआ। इनका अध्ययन करने के बाद आप अब द्विवेदी युगीन साहित्य की पृष्ठभूमि का विश्लेषण कर सकते हैं।

- सामाजिक राजनीतिक, एवं साहित्यिक चेतना का प्रारंभ भारतेंदु युग में ही हुआ। इसी चेतना का विस्तार एवं विकास द्विवेदी युग में हुआ। आप इस युग के साहित्यकारों एवं उनकी कृतियों के बारे में बता सकते हैं।

- द्विवेदी युग के साहित्यकारों ने, चाहे वे गद्य की रचना कर रहे हो या पद्य की, युगानुरूप साहित्य ही रचा।

- तत्कालीन समाज सुधार आंदोलन का प्रभाव समाज पर पड़ा था। सामाजिक समस्याओं को लेखकों ने विषय के रूप में चुना। राष्ट्रीय जनजागरण का कार्य किया तथा साहित्य में सर्वहारा वर्ग को स्थान दिया।

3.7 शब्दावली

अराजकता : अशांति, हलचल, शासन का अभाव

उच्छृंखलता : मनमाना काम करने की प्रवृत्ति

परिमार्जित : दोष, त्रुटियों से रहित

गरम तथा नरम दल : कांग्रेस पार्टी समझौता और उग्रता प्रदर्शित करने वालों का दल

उजागर : प्रकाशित, जगमगाता हुआ

भूतल : पृथ्वी

जर्जरित : जो पुराना होने के कारण काम का न रह गया हो

उत्पादन : उखाड़ता

3.8 उपयोगी पुस्तकें

शुक्ल, रामचंद्र, **हिंदी साहित्य का इतिहास,** काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

शर्मा, रामविलास, **महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण,** राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

तिवारी, पूनमचंद्र, **द्विवेदी युगीन काव्य,** मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, 97, मालवीय नगर, भोपाल-3।

वार्ष्णेय, लक्ष्मीसागर, **हिंदी साहित्य का इतिहास,** लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

3.9 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न

1) देखें उपभाग 3.2.1

2) देखें उपभाग 3.2.3

3) देखें उपभाग 3.2.3

अभ्यास

1) देखें भाग 3.2

बोध प्रश्न

4) देखें भाग 3.3

5) देखें उपभाग 3.3.1 (नाटक)

6) देखें उपभाग 3.3.1 (नाटक)

7) देखें उपभाग 3.3.1 (उपन्यास)

8) देखें उपभाग 3.3.1 (उपन्यास)

9) हिंदी की पहली श्रेष्ठ कहानी थी ''उसने कहा था''। इसके लेखक थे चंद्रधर शर्मा गुलेरी।

10) देखें उपभाग 3.3.1 (निबंध)

11) देखें उपभाग 3.3.2

12) देखें उपभाग 3.3.2

13) देखें उपभाग 3.3.2

14) देखें उपभाग 3.3.2

15) देखें उपभाग 3.3.2

16) नाथूराम शंकर शर्मा

17) देखें उपभाग 3.3.2

18) देखें उपभाग 3.3.2

19) देखें उपभाग 3.4.1

20) देखें उपभाग 3.4.1

21) देखें उपभाग 3.4.1

22) द्विवेदी युग के कवियों ने पौराणिक आख्यानों को समसामयिक संदर्भ से मोड़कर काव्य रचनाएँ की।

23) देखें उपभाग 3.4.2

अभ्यास

2) देखें उपभाग 3.4.3

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY